R.N.I. No. 2321/57
ओ३म्
रजि. सं. MTR नं. 004/2022-24
अक्टूबर 2022
अंक 9

तपोभूमि

मासिक

महर्षि दयानन्द सरस्वती

विष को पीकर अमृत बाँटा। तेरा ऋणी रहे संसार।।

(निर्वाण दिवस दीपावली)

सम्पादकीय

सभी समस्याओं का समाधान वैदिक शिक्षा

आज व्यक्तिगत जीवन में, पारिवारिक जीवन में, सामाजिक जीवन में, राष्ट्रिय जीवन में अनेक समस्यायें सामने खड़ी हैं जिनके कारण चतुर्दिक् अशान्ति का वातावरण दृष्टिगोचर हो रहा है। लूट-पाट, व्यभिचार, भ्रष्टाचार का ऐसा बोल-वाला है कि कोई भी अपने को सुरक्षित अनुभव नहीं कर रहा है। कभी निकट सम्बन्धियों के साथ रहने से व्यक्ति अपने को सुरक्षित अनुभव करता था। लेकिन आज उहीं निकट सम्बन्धियों से ही भय अधिक दिखाई दे रहा है। हम प्रतिदिन समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि पत्नी ने पति को मरवा दिया, पति ने पत्नी को मार डाला। सगे चाचा या मामा ने भतीजे या भांजे को अपहरण कर मार डाला, पिता ने पुत्री से दुष्कर्म कर दिया, छोटी बच्ची को उठाकर ले गये दुष्कर्म करके मार डाला, छात्र से दुष्कर्म कर दिया इत्यादि। कोई मत-पन्थ सम्प्रदाय जो शान्ति का ठेका लेते हैं वे इन कुटिल आचरणों में अछूते नहीं हैं। हर जग़ह दुराचारियों का साम्राज्य व्याप्त है। सरकार कानून बना देती है दुष्टों को फांसी आदि का दण्ड भी दिया जाता है पर स्थिति जैसी कि तैसी रहती है। जो हमारे शिक्षण संस्थान हैं उनका नैतिक पतन तो सीमातीत हो चुका है। नशेबाजी और व्यभिचार के सबसे बड़े केन्द्र वहीं बन गये हैं।

इस स्थिति को ठीक करने के लिए सरकार अनेक प्रकार के आयोग सुझाव देने के लिए गठित करती है। करोड़ों रुपये अध्ययन के लिए व्यय किये जाते हैं हजारों पृष्ठ की रिपोर्ट लिखी जाती है फिर उसको लागू करने के लिए करोड़ों रुपये व्यय होते हैं पर बात वहीं की वहीं रहती है। पर आश्चर्य यह है कि इन सारी समस्याओं का समाधान ऋषियों ने अपने छोटे-छोटे ग्रन्थों में लिखा है उसकी ओर किसी का ध्यान क्यों नहीं जाता है। देश का दुर्भाग्य है कि देश के कर्णधार इस ऋषियों की शिक्षा से बिल्कुल अनभिज्ञ और विमुख है। हमारा दृढ़ मत है कि जब तक संसार शिक्षा की वैदिक प्रणाली को स्वीकार नहीं करता है तब तक यह अशान्ति की अग्नि संसार को भस्मसात् करती रहेगी। मानव जीवन को सुखी बनाने के लिए हमारी भौतिक उन्नति हमें सर्वनाश के पथ पर बलात् ले जाती रहेगी और मानव जीवन ही नहीं प्राणिमात्र का जीवन संकट में पड़ा रहेगा। अतः हम सबका दायित्व है कि हम पुनः अपने वैदिक आदर्शों की ओर जायें और शान्ति का साम्राज्य स्थापित कर मानव जीवन को संकटों से बचायें।

वैदिक शिक्षा की प्रणाली प्राचीन गुरुकुलों में हुआ करती थी जहाँ आचार्यों का सारा ध्यान इसी बात पर केन्द्रित रहता था कि विद्यार्थी अपना जीवन उन्नत बनाकर राष्ट्र और समाज के लिए वरदान कैसे सिद्ध हो। प्रथम तो वैदिक संस्कारों से ओत प्रोत माता-पिता ही बच्चे की प्रारम्भिक शिक्षा उद्देश्य के प्रति समर्पित होने की कर देते थे। जब विद्यार्थी घर से गुरुकुल में जाता था तब आचार्य उससे यह प्रश्न करता था कि बेटा पढ़ने का उद्देश्य क्या है? संस्कारी विद्यार्थी यही अपने गुरु के चरणों में निवेदन करता था कि गुरुदेव हमने ऐसा सुना है पण्डित अर्थात् विद्वान् यहाँ बनाये जाते हैं और विद्वान् सभी प्रकार से सुख शान्ति की स्थापना करने वाले होते हैं। अतः हम भी पण्डित बनने के लिए आपके श्री चरणों में आये हैं उसी समय आचार्य भी उनके जीवन के पथ को निर्धारित करने के लिए एक सीमा बाँध देता था कि आप इस लक्ष्य को किन साधनों से प्राप्त कर सकते हैं।

-शेष पृष्ठ संख्या 35 पर

तपोभूमि

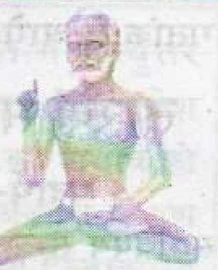

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्0)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–68 संवत्सर 2079 अक्टूबर 2022 अंक 9

*
संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

*
संपादक
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

*
सहसम्पादक
आचार्य हरिशंकर अग्निहोत्री
मोबा. 9897060822

*
व्यवस्थापक
कन्हैयालाल आर्य
मोबा0 9759804182

*
अक्टूबर 2022

*
सृष्टि संवत्
1960853123

*
दयानन्दाब्द: 198

*
प्रकाशक
सत्य प्रकाशन, मथुरा

अनुक्रमणिका

लेख–कविता	पृष्ठ संख्या	लेख–कविता	पृष्ठ संख्या
तारकं सर्व विषयं सर्वथाविषयमक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम्	4	सदा ज्ञातश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभो:	-
सत्त्वपुरुषयो: शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति	4–5	पुरुषस्या परिणामित्वात्	17–18
उपसंहार	5	नतत्वाभासं दृश्यत्वात्	18
अथ चतुर्थ कैवल्य पाद:		एकसमयेचोभयानवधारणम्	18–19
जन्मौषधिमन्त्रतप: समाधिजा सिद्धय:	5–6	चित्तान्तरदृश्ये बुद्धिबुद्धरतिप्रसंग: स्मृतिसंकरश्च	19–20
जात्यन्तरपरिणाम: प्रकृत्यापूरात्	6	चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम्	21
निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु तत: क्षेत्रिकवत्	6–7	द्रष्टृदृश्योपरक्त चित्तं सर्वार्थम्	21
निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात्	7–8	तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि पदार्थ संहत्यकारित्वात्	22
प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तमेकमनेकेषाम्	8	विशेषदर्शिन: आत्मभवभावनाविनिवृत्ति:	22–23
तत्रध्यानजमनाशयम्	8–9	तदाविवेकनिम्नं कैवल्य प्राग्भारंचितम्	23
कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम्	9	तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्य:	23
तत:तद्विपाकानुगुणानामेवाभिव्यक्तिर्वासनानाम्	9–10	हानमेषां क्लेशवदुक्तम्	24
जातिदेशकालव्यवहितानामप्यानन्तर्यं स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात्	10–11	प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघ: समाधि:	24
तासामनादित्वं चाऽऽशिषो नित्यत्वात्	11–12	तत: क्लेशकर्मनिवृत्ति:	24
हेतुफलाश्रयालम्बनै: सङ्गृहीतत्वारेषामभावे तदभाव:	12–13	तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम्	25
अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यवभेदाद्धर्माणाम्	13–14	तत: कृतार्थानांपरिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम्	25
ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मान:	14	क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्य: क्रम:	25–26
परिणामैकत्त्वाद्वस्तुतत्वम्	14–15	पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसव: कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति	27
वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयो र्विभक्त: पन्था:	15–16	आवश्यक सूचना	28–34
न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा स्यात्	16–17		
तदुपरागापेक्षित्वात्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम्	17		

***

वार्षिक शुल्क 200/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 2100/–

गतांक से आगे–

तारकं सर्व विषयं सर्वथाविषयमक्रमं चेति विवेकजं ज्ञानम्।। 54।।

पदार्थ– (तारकम्) संसार सागर से तराने वाला होने से जो तारक ज्ञान है (सर्वविषयम्) तथा सर्वविषय सम्बन्धी (सर्वथाविषयम्) सर्व प्रकार के विषयों वाला (च) और (अक्रमम्) क्रम की अपेक्षा न रखता हुआ अर्थात् निरन्तर वर्तमान या एक साथ वर्तमान हो (इति विवेकजं ज्ञानम्) बस यह विवेकज ज्ञान है।

भाष्यानुवाद– **(तारकमितिं स्वप्रतिभोत्थमनौपदेशिकमित्यर्थः)** तारक ज्ञान वह है जो अपनी प्रतिभा से उद्‌भव हुआ हो अर्थात् बिना किसी के उपदेश दिये जो हो। **(सर्वविषयं नास्य किश्चद्‌विषयीभूतमित्यर्थः)** सर्व विषय–का अर्थ है कि कोई विषय इस ज्ञान से छूटा न हो **(सर्वथा विषयमतीतानागतप्रत्युत्पन्नं सर्व पर्यायैः जानातीत्यर्थः)** सर्वथाविषय–जो ज्ञान अतीत अनागत वर्तमान सब को बारी बारी से जानता है। **(अक्रममेकक्षणोपारूढं सर्वं सर्वथा गृह्वातीत्यर्थः)** अक्रम–जो एक क्षण में ग्राह्य कि सब को सर्वथा ग्रहण करता है। **(अस्यैवांशो योगप्रदीपो मधुमतीं भूमिमुपादाय यावदस्य परिसमाप्तिरिति)** इस ही विवेकज ज्ञान योगप्रदोष मधुमती भूति को लेकर जब तक परिसमाप्ति **'सप्तप्रान्तभूमिप्रज्ञा'** ही रहता है।

भाष्य का भावार्थ– तारक ज्ञान उसे कहते हैं जो बिना किसी से उपदेश किये योगी के हृदय में प्रकाशित हो। सर्व विषयक भी हो अर्थात् कोई पदार्थ इस ज्ञान से बाहर नहीं रहता इसी ज्ञान का नाम विवेकज ज्ञान है।

सत्त्वपुरुषयोः शुद्धिसाम्ये कैवल्यमिति।। 55।।

पदार्थ– (सत्त्वपुरुषयोः) बुद्धिसत्त्व और पुरुष अर्थात् चेतन आत्मा के (शुद्धिसाम्ये) निर्मलता की समता जब हो जाती है–अर्थात् पुरुष के समान निर्मल (पाप एवं हिंसादि रहित) हो जाती है तब (कैवल्यमिति) बस यह कैवल्य है।

भाष्यानुवाद– **(यदा निर्धूतरजस्तमोमल बुद्धिसत्त्वं पुरुषान्यताख्यातिमात्राधिकारं दग्धक्लेशक्लेशबीजं भवति तदा पुरुषस्य शुद्धिसारूप्यमिवापन्नं भवति तदा पुरुषस्योपचरितभोगाभावः शुद्धिः)** जब रजोगुण तमोगुणरूप मल से रहित पुरुष की अन्यता प्रतीतिमात्र कराने वाला जले हुए वीजों के जैसा हो जाता है तब वह आत्मा की शुद्धिरूपता जैसी स्थिति को प्राप्त होता है। उस समय उपस्थित भोगों का अभाव हो जाना ही पुरुष = आत्मा की शुद्धि है। **(एतस्यामवस्थायां कैवल्यं भवतीश्वरस्यानीश्चरस्य वा)** इस अवस्था में ईश्वर अर्थात् पूर्वोक्त संयमों से ज्ञान के स्वामी या अस्वामी के एवं विवेकजज्ञान के भागी या इतर = विवेकजज्ञान के अभागी का मोक्ष हो जाता है। **(नहिं दग्धक्लेशबीजस्य ज्ञाने पुनरपेक्षा काचिदस्ति)** दग्धक्लेशबीज वाले योगी को फिर किसी के सहाय की इच्छा नहीं है। **(सत्त्वशुद्धिद्वारेणैतत्समाधिजमैश्वर्यं ज्ञानं चोपक्रान्तम्)** सत्त्वशुद्धि द्वारा यह समाधि से साधित

ऐश्वर्य और ज्ञान को प्राप्त करता है। **(परमार्थतस्तु ज्ञानददर्शनं निवर्तते तस्मिन्निवृत्तेन न सन्त्युत्तरे क्लेशा:)** वास्तव में ज्ञान से विषयों की निवृत्ति होती है, उसके निवृत्त हो जाने पर अविद्या आदि क्लेश नहीं रहते हैं। **(क्लेशाभावात् कर्मविपाकाभाव)** क्लेशों के अभाव से क्रमों और फलों का अभाव हो जाता है। **(चरिताधिकाराश्चैतस्यामवस्थायां गुणा न पुरुषस्य दृश्यत्वेनोपतिष्ठन्ते)** इस अवस्था में गुण कार्य समाप्त कर चुके होते हैं फिर वे पुरुष अर्थात् आत्मा के दृश्य बन कर उपस्थित नहीं होते **(तत्पुरुषस्य कैवल्यं तदा पुरुषः स्वरूपमात्रज्योतिरमलः केवलो भवति)** वह पुरुष का कैवल्य है। तब पुरुष आत्मा स्वरूप मात्र ज्योति वाला मल रहित केवलो होता है।

ऋषि भाष्य– (सत्त्वपुरुष0) अर्थात् सत्त्व जो बुद्धि और पुरुष जो जीव, उन दोनों की शुद्धि से मुक्ति होती है, अन्यथा नहीं।

उपसंहार

इस पाद में योग के तीन अंग ध्यान, धारणा, समाधि का वर्णन करके उन तीनों की एक 'संयम' संज्ञा नियत करके, संयम के विषयों को दिखलाने के निमित्त तीन परिणामों का वर्णन किया। संयम के बल से उत्पन्न हुई पूर्वान्त, परान्त और मध्यभाव की सिद्धियों का वर्णन करके, समाधि के अभ्यास को दृढ़ करने के निमित्त बाह्य भुवन अनादि रूप और आभ्यन्तर कायव्यूह ज्ञानरूप सिद्धियों को कहके समाधि उपकार निमित्त इन्द्रियजय और प्राणजय आदि का वर्णन भी किया। परम पुरुषार्थ अर्थात् मुक्ति की प्राप्ति के निमित्त क्रम से अवस्था सहित भूतेन्द्रिजय और सत्त्वजय का वर्णन भी किया। विवेकज्ञान के निर्णय के उपाय कहे फिर सब समाधि और अवस्थाओं में उपकार करने वाले तारक ज्ञान का भी वर्णन किया। उस तारक ज्ञान में योगी के चित्त को अधिकार प्राप्त हो जाता है तब उसको कैवल्य प्राप्त होता है, यह भी वर्णन किया है।

दोहा– **अंग तीन परिणाम कथ, कियो पाद को अन्त।**
योग विभूति विशालता, ताको जानत सन्त।।

इति पातंजले सांख्यप्रवचने योगशास्त्रे विभूतिपादस्तृतीयः।

अथ चतुर्थ कैवल्य पादः

अवतरण– प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय पाद में योग के लक्षण, योग के साधन और योग की विभूतियों का विस्तार पूर्वक निरूपण किया। अब इस चतुर्थ पाद में कैवल्य का निरूपण करते हुए कैवल्य योग्य चित्त के निर्णयार्थ प्रथम पांच प्रकार के सिद्ध चित्तों का कथन करते हैं–

जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजा सिद्धयः।। 1 ।।

पदार्थ– (जन्मौषधि0) जन्म, औषधि, मन्त्र, तप और समाधि इन पांचों से उत्पन्न हुई पांच

प्रकार की (सिद्धयः) सिद्धियाँ हैं।

भाष्यानुवाद– (देहान्तरिता जन्मना सिद्धिः) 1–संस्कारी पुरुषों को दूसरे देह (पूर्व जन्म) से आई हुई 'जन्मजा' सिद्धि होती है। **(औषधिभिरसुरभवनेषु रसायनेनेत्येवमादिः)** 2–रसायन आदि से 'औषधिजा' सिद्धि मिलती है। **(मन्त्रैराकाशगमनादिलाभः)** 3– वेदाध्ययन रूप 'मन्त्रजा' चित्त सिद्धि से आकाशगमन आदि का लाभ **(तपसाः संकल्पसिद्धिः कामरूपी यत्र यत्र कामग इत्येवमादि)** 4–ब्रह्मचर्यादि तप से 'तपजा' चित्त सिद्धि होने प संकल्पसिद्धि कामरूपी जहां जहां चाहे कामग अर्थात् इच्छाचारी होता है। **(समाधिजाः सिध्यो व्याख्याताः)** और 'समाधिजा' सिद्धि का 'पिछले तृतीयपाद में' व्याख्यान कर दिया है।

संगति– (तत्र कायेन्द्रियाणामन्यजातीयपरिणतानाम्–) उनमें शरीर तथा इन्द्रियां पूर्व से विलक्षण कैसे हो जाते हैं, यह अगले सूत्र में कहते हैं।

भाष्य का भावार्थ– भाव यह है कि चित्तसिद्ध के यह पांच प्रकार हैं, इन प्रकारों से योगी का चित्त सिद्ध होने से उसके शरीर तथा इन्द्रियों में दिव्य सामर्थ्य की प्राप्ति होती है।

जात्यन्तरपरिणामः प्रकृत्यापूरात्।। 2।।

पदार्थ– (प्रकृत्यापूरात्) प्रकृतियों के आपूर से (जात्यन्तरपरिणामः) पूर्वजन्म के भावों को त्यागकर अन्य प्रकार का परिणाम होता है।

भाष्यानुवाद– (पूर्वपरिणामापाय उत्तपरिणामोपजनस्तेषामपूर्वावयवानु प्रवेशाद् भवति) पूर्व परिणाम के समाप्त हो जाने पर उत्तर परिणाम का उद्भव या आगमन होता है और वह उन परिणाम योग्यों के अपूर्व अवयवों के अनुप्रवेश से होता है **(कायेन्द्रियप्रकृतयश्च स्वं स्वं विकारमनुगृह्णन्त्यापूरेण ध र्मादिगिमित्तमपेक्षमाणा इति)** काया और इन्द्रियों की प्रकृतियां भरपूर होने समर्थ होने से अपने–अपने विकार का प्रारम्भ आदि निमित्त को अपेक्षित करती हुई करती है।

भाष्य का भावार्थ– भाव यह है कि चित्त और इन्द्रियों की प्रकृति के अवयवों का आरम्भ कर देना जात्यन्तर परिणाम कहलाता है अर्थात् शरीर का औषधि से और चित्त तथा इन्द्रियों का स्वाध्यायादि संस्कारों से परिवर्त्तन हो जाता है।

निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्।। 3।।

पदार्थ– (निमित्तं) धर्मादिक जो निमित्त हैं वह (प्रकृतीनां) प्रकृतियों का (अप्रयोजकं) प्रयोजक–प्रेरक नहीं हैं (तु) किन्तु (ततः) धर्मादिक निमित्तों से (क्षेत्रिकवत्) खेत जोतने वाले किसान की भांति (वरणभेदः) प्रतिबन्धक की निवृत्ति होती है।

भाष्यानुवाद– (न हि धर्मादि निमित्तं तत्प्रयोजकं प्रकृतीनां भवति) वह धर्म आदि निमित्त प्रकृतियों का प्रयोजक अर्थात् प्रेरक नहीं होता है **(न कार्येण कारणं प्रवर्त्यते)** कार्य से कारण प्रवृत्त नहीं होता **(कथं तर्हि, वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्)** तो कैसे प्रकृतियों का आपूर–आवेश प्रवेश दूसरे शरीर में

होता है? 'उत्तर' जबकि आवरण-रोधक का भेदन खेत वाले किसान के द्वारा जैसे हो जाता है 'वैसा हो जाता है तो प्रकृतियां भी जन्मान्तर में चली जाती हैं' **(यथा क्षत्रिकः केदारादपां पूर्णात्केदारान्तरं पिप्लावयिषुः समं निम्नं निम्नतरं वा नापः पाणिनाऽपकर्षत्यावरणं त्वासां भिनत्ति तस्मिन् भिन्ने स्वयमेवापः केदारान्तरमाप्लावयन्ति तथा धर्मः प्रकृतीनामावरणधर्मं भिनत्ति तस्मिन् भिन्ने स्वयमेव प्रकृतस्यः स्वं स्वं विकारमाप्लावयन्ति)** जैसे किसान जलों से पूर्ण खेत दूसरे समान अधिक नीचे खेत में पहुंचाने-बहाने का इच्छुक जल को हाथ से नहीं सरकाता किन्तु जलों के आवरण मेंड को तोड़ देता है। उसके टूट जाने पर जल स्वयं ही एक खेत से दूसरे खेत में चला जाता है। वैसे ही धर्म भी प्रकृतियों के आवरण गुण का भेदन कर देता है। उसका भेदन हो जाने पर स्वयं ही प्रकृतियां अपने अपने विकार को प्राप्त हो जाती हैं **(यथा वा स एव क्षेत्रिकस्तस्मिन्नेव केदारे न प्रभवत्यौदकामू भौमान् वा रसान् धान्यमूलान्यनुप्रवेशयितुं किं तर्हि मुद्गवेधुकश्यामाकादींस्ततोऽपकर्षति)** अथवा जैसे वह ही किसान उसी खेत में जलसम्बन्धी, भूमि सम्बन्धी रसों को धान्यों चावलों की जड़ों में प्रविष्ट करने की समर्थ नहीं होता किन्तु मुद्ग, गवेषुक-गोजवी, श्यामक आदि को वहां से हटाता है। **(अपकृष्टेषु तेषु स्वयमेव रसाधान्यमूलान्यनुप्रविशन्ति तथा धर्मो निवृत्तिमात्रे कारणमधर्मस्थ शुद्ध्यशुद्ध्योरत्यन्तविरोधात्, न तु प्रकृतिप्रवृत्तौ हेतु भवतीति)** उनके हट जाने पर स्वयं ही रस-धान्य-चावलों की जड़ों में प्रवेश कर जाते हैं। उसी प्रकार अधर्म की निवृत्ति मात्र में धर्म कारण है। शुद्धि और अशुद्धि के अत्यन्त विरोध होने से प्रकृति की प्रवृत्ति में धर्म कारण नहीं बनता है **(अत्र नन्दीश्वरादय उदाहार्थाः)** यहां नन्दीश्वर आदि उदाहरण देने योग्य हैं **(विपयर्येणप्यधर्मो धर्म बाधते)** विपरीत रूप से भी लें तो अधर्म धर्म को बांधता है **(सतश्चाशुद्धिपरिणामः)** तब अशुद्धि का परिणाम हो सकता है **(तत्रापि नहुषाजगरादय उदाहार्याः)** वहां भी नहुष अजगर आदि उदाहरण देने योग्य हैं।

भाष्य का भावार्थ– धर्मादिक प्रकृति वा वरणभेद के कारण नहीं हैं क्योंकि कार्य से कारण उत्पन्न नहीं होता। परन्तु वरणभेद होने का क्रम है कि जैसे किसान जब किसी जल से भरी क्यारी से जल दूसरी क्यारी में ले जाना चाहता है तब केवल क्यारियों की मेंड़ काटने से जल स्वयं ही दूसरी क्यारी में चला जाता है। इसी रीति से धर्म द्वारा अधर्मरूपी मेंड काटने से प्रकृतिभेद स्वयं हो जाता है। जैसे एक ही जल अनेक अन्न का कारण होता है ऐसे ही प्रकृति के परिणाम भी समझने चाहिए। प्रथमोक्त क्रम में नन्दीश्वर का उदाहरण है अर्थात् नन्दीश्वर नामक एक मनुष्य देवत्व को धर्म से प्राप्त हो गया और नहुष अधर्माचरण से देव दशा से अजगर हो गया था यह सब कथा ब्राह्मण ग्रन्थों में लिखी हैं।

निर्माणचित्तान्यस्मितामात्रात् ।। 4 ।।

पदार्थ– (अस्मितामात्रात्) अस्मितामात्र अर्थात् अहंकार से। (निर्माणचित्तासि) चित्त निर्माण होते हैं।

भाष्यानुवाद– (अस्मितामात्रं चिखकारणमुपष्दाय निर्माणचित्तानि करोति ततः सचित्तानि

'शरीराणि' भवन्तीति) अस्मितामात्र अहंकार रूप चित्त के कारण को लेकर योगी चित्तों को निर्माण करता है पुनः शरीर सचित्त-चित्त वाले अर्थात् कृत्रिम चित्त वाले होते हैं।

विशेष– इस सूत्र के भाष्य में पौराणिक टीकाकारों ने योगी में अनन्त शरीर उत्पन्न करने का सामर्थ्य माना है और उस अनेक शरीरों के लिए योगी अनेक ही चित्त उत्पन्न कर लेता है अर्थात् योगी के भिन्न-2 शरीरों में भिन्न 2 चित होते हैं यह ठीक नहीं, क्योंकि ऐसा मानने से यह दोष उत्पन्न होता है कि एक-एक चित्त अपने 2 शरीर को जिधर चाहेगा उधर ही ले जावेगा और ऐसा होने से फिर कोई व्यवस्था न रहेगी, क्योंकि उन सब चित्तों का नियन्ता कोई एक नहीं? इस दोष को दूर करने के लिए यह उत्तर दिया है कि योगी एक और चित्त उत्पन्न कर लेता है जो उन सब चित्तों का स्वामी होता है और वही सब चित्तों की आज्ञा में रखता है। इस प्रकार असम्भव अर्थों से योग को खेल के खिलौनों के समान बना दिया है जो सूत्रों के आशय से सर्वथा विरुद्ध हैं। इसी आशय को सिद्ध करने के लिए पौराणिक टीकाकारों ने निम्नलिखित सूत्र के अर्थ भी बदल दिए हैं।

प्रवृत्तिभेदे प्रयोजकं चित्तमेकमनेकेषाम्।। 5।।

पदार्थ– (अनेकेषाम्) अनेक चित्तों के (प्रवृत्तिभेदे) प्रवृत्ति भेद होने में (एकं प्रयोजकं चित्तम्) एक मुख्यचित्त प्रयोजक-प्रेरक है।

भाष्यानुवाद– (बहूनां चित्तानां कथमेकचिताभिप्रायपुरः सरा प्रवृत्तिरिति सर्वचित्तानां प्रयोजकं चित्तमेकं निर्मिमीते ततः प्रवृत्तिभेदः) बहुत चित्तों की एक चित्त को लेकर कैसे प्रवृत्ति होती है? इसका कारण यह है कि सारे चित्तों का प्रेरक चित्त एक है-वह एक चित्त जब अन्य चित्तों का निर्माण करता है तो प्रवृत्ति भेद हो जाता है।

विशेष– इस सूत्र का उक्त अर्थ सर्वथा असंगत है। वास्तव में सूत्र के अर्थ संगति से यों बनते हैं कि उक्त मन्त्रादि साधनों से एक चित्त पांच प्रकार का कैसे हो सकता है? इसका उत्तर यह दिया गया है कि (अनेकेषाम्) अनेक कार्यों को (प्रवृत्तिभेदे) भिन्न 2 दशा में (एक, चित्तं) एक चित्त ही (प्रयोजकं) हेतु हैं।

अर्थात्– सात्त्विकी प्रवृत्ति वालों के लिये वही चित्त सात्त्विकभावापन्न, तामसी प्रवृत्ति वालों के लिये वही चित्त तमोभावापन्न और राजसी प्रवृत्ति वालों के लिये वही चित्त रजोभावापन्न हो जाता है।

तत्रध्यानजमनाशयम्।। 6।।

पदार्थ– (तत्र) उन पांच प्रकार के चित्तों में से (ध्यानजं) ध्यान समाधिरूप सिद्धि से सिद्धचित्त (अनाशयं) क्लेशादि वासनाओं से रहित हुआ कैवल्य का उपयोगी होता है।

भाष्यानुवाद– (पंचविधं निर्माणचित्तं जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजा सिद्धय इति) निर्माणचित्त पांच प्रकार का होता है कारण कि जन्म, औषधि, मन्त्र, तप, समाधि से पांच सिद्धियां होती हैं 'इन से पांच प्रकार के चित्त होते हैं' **(तत्र यदेव ध्यानजं चित्तं तदेवानाशयं तस्मैव नास्त्याशयो रागादिप्रवृत्ति नार्तः पुण्यपापाभिसम्बन्धः क्षीणक्लेशत्वाद् योगिन इति)** उनमें जो ध्यान से उत्पन्न-समाधि से उत्पन्न

चित्त है वही आशयरहित-वासना-रहित होता है। योगी के अविद्यादि क्लेशों के क्षीण हो जाने के कारण उससे पुण्य-पाप का सम्बन्ध या संसर्ग नहीं होता। **(इतरेषां तु विद्यते कर्माशयः)** हां, औरों का तो कर्माशय-कर्मक्षेत्र होता है। (यतः-) जिससे-

भाष्य का भावार्थ- उक्त पांच प्रकार के चित्तों में से वासनारहित चित्त ही समाधि का उपयोगी है।

कर्माशुक्लाकृष्णं योगिनस्त्रिविधमितरेषाम्।। 7।।

पदार्थ- (योगिनः) योगी का (कर्म) कर्म (अशुक्लाकृष्णम्) पुण्य पाप से रहित होता है (इतरेषाम्) दूसरों-अयोगियों का कर्म (त्रिविधम्) तीन प्रकार का होता है।

भाष्यनुवाद- (चतुष्पदी खल्वितं कर्मजातिः) यह कर्मजाति चार पादवाली है। **(कृष्णा शुक्लकृष्णा शुक्ला-अशुक्लाकृष्णा चेति)** (1) पाप, (2) पुण्यपाप, (3) पुण्य, (4) अपुण्य-अपाप **(तत्र कृष्णा दुरात्मनाम्)** उनमें प्रथम पाप तो दुरात्मा की कर्म जाति है। (शुक्लकृष्णा बहिःसाधनासाध्या) दूसरे पुण्यपाप मिश्रित कर्म जाति बाहिरी साधनों से सिद्ध होने योग्य है **(तत्र परपीड़ानुग्रहद्वारेणैव कर्माशयप्रवयः)** उसमें दूसरे के प्रति पीड़ा और दया दोनों के द्वारा ही कर्माशय-होता है **(शुक्ला तपःस्वाध्यायध्यानवताम्)** तीसरा पुण्य कर्म तपस्वाध्यायध्यानवालों का होता है **(सा हि केवले मनस्यायत्तत्वादबहिःसाधनाधीना न परान् पीडयित्वा भवति)** वह ही केवल मन में आवृत्त होने से बहिः साधनाधीन नहीं अतएव दूसरों को पीड़ा देकर नहीं होता **(अशुक्लाकृष्णां संन्यासिनां क्षीणक्लेशानां चरमदेहानामिति)** पुण्यपाप से रहित चौथे प्रकार का कर्म अविद्या आदि क्लेश जिनके क्षीण हो गए हैं ऐसे अन्तिम देह वाले संन्यासियों का होता है। **(तत्राशुक्लं योगिन एव फलसन्यासादकृष्णां चानुवादानात्)** उसमें अशुक्ल =पुण्य से रहित फल को छोड़ देने से और अकृष्णा =पाप से रहित स्वीकार न करने से कर्म योगियों का ही होता है। **(इतरेषां तु भूतानां पूर्वमेव त्रिविधमिति)** अन्य प्राणियों का तो पहिला त्रिविध ही होता है।

भाष्य का भावार्थ- कर्म जाति चार प्रकार की है। उनमें से दुरात्माओं की कर्मगति पापमय होने से 'कृष्ण' अर्थात् काली होती है। दूसरी अन्य जीवों को पीड़ा देना वा अनुग्रह करने से जो कर्म-समूह मिश्रित होता है वह 'शुक्लकृष्णा'। तीसरी जो गति अन्तःसाधना के अधीन है वह 'शुक्ला' है। वह कर्मगति स्वाध्याय और तप करने वाले लोगों की होती है। और जो निष्काम कर्म होने से शुक्ला भी नहीं और न वेद विरुद्ध होने से कृष्णा हैं। वह 'अशुक्ला अकृष्णा' संन्यासियों (योगियों) की कर्म जाति है।

ततःतद्विपाकानुगुणानामेवाभिव्यक्तिर्वासनानाम्।।8।।

पदार्थ- (ततः) ततः (तद्विपाकानुगुणानाम्-एव) उन कर्मों के फलों के अनुरूप (वासनानाम्-अभिव्यक्तिः) वासनाओं की प्रकटता होती है।

भाष्यानुवाद- (ततः इति त्रिविधात् कर्मणः, तद्विपाकानुगुणानामेवेति यज्जातीयस्य कर्मणो

यो विपाकस्तस्यानुगुणा या वासनाः कर्मविपाकमनुशेरते तासामेवाभिव्यक्तिः) उस त्रिविध, 'पुण्य, पाप पुण्य-पाप' कर्म से उनके फलों के अनुरूप जो वासनाएँ कर्मफल के पीछे रह जाती हैं, उनकी प्रकटता होती हैं। **(न हि दैवं कर्माविपच्यमानं नारकतिर्यङ्मनुष्यवासनाभिव्यक्तिनिमितं समभवति)** दिव्य कर्म पकता हुआ नरक, सम्बन्धी योनि, तिर्यक = पशु एवं सर्पादि और मनुष्य सम्बन्धी वासनाओं की प्रकटता का कारण नहीं हो सकता। **(किन्तु दैवानुगुणा एवास्य वासना व्यज्यन्ते)** किन्तु दैव कर्मों से दिव्य वासना ही प्रकट होती हैं। **(नारकतिर्यङ्मनुष्येषु चैवं समानाश्चर्चः)** नरक, तिर्यक् और मनुष्य में भी इसी प्रकार समान विचार का प्रसंग है।

भाष्य का भावार्थ– पूर्व सूत्र में जो तीन प्रकार के कर्म कहे उनके अनुसार ही फल और फलानुसार वासना उत्पन्न होती है। अर्थात् जिस प्रकार का कर्म होता है उससे वैसी ही वासना होती है। जैसे दैव कर्म से दिव्य वासना होती है उनसे न नरक वासना और न तिर्यगादि वासना प्रकट होती है और ऐसे ही तिर्यगादि कर्मों से दिव्यवासना नहीं होती।

जातिदेशकालव्यवहितानामप्यानन्तर्यं स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात्।।9।।

पदार्थ– (स्मृतिसंस्कारयोः) स्मृति और संस्कार की (एकरूपत्वात्) एक रूपता से। (जातिदेशकाल-व्यवहितानाम्-अपि) जन्म, देश और काल से, व्यवहित-छिपी हुई वासनाओं का भी (आनन्तर्यम्) अन्तरराहित्य = उदय हो जाता है।

भाष्यानुवाद–(वृषदंशविपाकोदयः स्वव्यंजकाज्जनाभिव्यक्तः) कर्म फल अपने व्यज्जक साधनों को पाकर प्रकट हो जाता है। **(स यदि जातिशतेन वा दूरदेशतया वा कल्पशतेन वा व्यवहितः पुनश्च स्वव्यंजकांजन एवोदियाद् द्रागित्येव पूर्वानुभूतवृषदंशविपाकाभिसंस्कृता वासना उपादाय व्यज्येत)** वह यदि सैकड़ों जन्मों से या दूर देश से या कल्प भर काल से छिपा हुआ हो फिर भी अपने प्रकट करने वाले निमित्त को पाकर तुरन्त ही उदय हो जाता है। यह पूर्व अनुभव है कि पुण्य-अपुण्य कर्माशय से संस्कृत वासनायें अपने साधन को पाकर प्रकाशित होती हैं **(कस्मान्)** क्योंकि **(यतो व्यवहितानामप्यासां सदृशं कर्माभिव्यंजकं निमित्तोभूतमित्यानन्तर्यमेव)** जिससे इन छिपी हुई वासनाओं के समान कर्म प्रकटता करने वाला निमित्तभूत है अतः रुकावट नहीं है। **(कुतश्च, स्मृतिसंस्कारयोरेकरूपत्वात्)** कैसे? स्मृति और संस्कार के एकरूपत्व होने से **(यथानुभवस्तया संस्कारः)** जैसा अनुभव हो वैसे संस्कार होते हैं। **(ते च कर्मवासनारूपाः)** और वे कर्मवासना के अनुरूप होते हैं। **(यथा च वासनास्तथा स्मृतिरिति जातिदेशकालव्यवहितेभ्यः संस्कारेभ्यः स्मृतिः)** जैसी वासनायें हो वैसी ही स्मृति होती है। अतः जाति, देश, काल की रुकावट में रहने वाले संस्कारों से स्मृति होती है। **(स्मृतेश्च पुनः संस्कारा इत्येवमेते स्मृतिसंस्कारा कर्माशयवृत्तिलाभवशाद् व्यंजन्ते)** और स्मृति से फिर संस्कार इस प्रकार ये स्मृति संस्कार कर्म संस्थान वृत्ति के लाभ से प्रकट होते हैं। **(अतएव व्यवहितानामपि निमितनैमित्तिकभावा-नुच्छेदादानन्तर्यमेव सिद्धिमिति)** अतः छिपी हुई वासनाओं का भी नैमत्तिक भावों के नाश न होने से प्राकटय सिद्ध है।

भाष्य का भावार्थ– कर्म फल अपने साधनों द्वारा प्रकाशित होता है, व्यंजक अर्थात् उदित होने में सहायक के पाने से प्रकट होता है। ऐसे ही कर्म की वासना भी उदित होती है। वह यदि सौ जन्म से अथवा अधिक दूर देश से या सौ कल्प से व्यवहित हो तो भी अपने आश्रय को पाकर उदित होता है क्योंकि इन स्मृति और वासनाओं का प्रकाशित करने वाला निमित्त एक ही है, क्योंकि ये स्मृति और संस्कार एक ही रूप हैं। जैसा अनुभव होता है वैसा ही संस्कार होता है, वे वैसी ही स्मृति हैं। इस रीति से जन्म, देश और काल से जो व्यवहित संस्कार हैं उनसे स्मृति उत्पन्न होती हैं। स्मृति से फिर संस्कार होते हैं। यह स्मृति और संस्कार कर्मफल में समान उदित होते हैं।

तासामनादित्वं चाऽऽशिषो नित्यत्वात।। 10।।

पदार्थ– (आशिषः– नित्यत्वात्) कल्याण की इच्छा के नित्य होने से (तासाम्) उन वासनाओं का (अनादित्व) अनादित्व है।

भाष्यानुवाद– **(तासां वासनानामाशिषो नित्यत्वादनादित्वम्)** उन वासनाओं का आशीः–भावना–भीतरी इच्छा के नित्य होने से अनादित्व सिद्ध हो जाता है। **(येदयमात्माशीर्मा न भवंभूयासमिति सर्वस्व दृश्यते सा न स्वभाविकी)** यह जो आत्मा की भीतरी इच्छा है कि मैं बना रहूं यह सबको दिखलाई पड़ती है, वह स्वाभाविक नहीं है। **(कस्मात्)** कैसे? **(जातमात्रस्य जन्तोरननूभूतमरणाधर्मकस्य द्वेषदुःखानुस्मृतिनिमित्तो मरणात्रासः कथं भवेत्)** उत्पन्न मात्र जन्तु के मरणधर्म के अनुभव किए बिना द्वेष दुःख के अनुसार स्मृति के निमित्तवाला मरणभय कैसे हो सके। **(न च स्वाभाविकं वस्तु निमित्तमुपादत्ते)** और स्वाभाविक वस्तु निमित्त को नहीं लेती है। **(तस्मादनादिवासनानुविद्धं चित्तं निमित्तवशात् काश्चिदेव वासनाः प्रतिलभ्य पुरुषस्य भोगायोपावर्तत इति)** इतने अनादि वासनाओं से युक्त यह चित्त के वश से किन्हीं वासनाओं को प्राप्त करके पुरुष भोग के लिये उपस्थित होता है **(घटप्रासादप्रदीपकल्पं संकोचविकासि चित्तं शरीरपरिमाणाकारमात्रमित्यपरे प्रतिपन्नाः)** घड़े और महल के अन्दर रखे दीपक की भांति संकोचविकासधर्मवाला चित्त शरीर के परिणाम आकारमात्रवाला है ऐसा अन्य मानने वाले हैं। **(तथा चान्तराभावः संसारश्च युक्त इति)** इसी कारण अन्तर का अभाव है और संसार उचित है। **(वृत्तिरेवास्य विभुनश्चित्तस्य संकोचविकासिनोत्याचार्यः)** वृत्ति ही इस बिभु चित्त की संकोचविकासवाली है यह आचार्य मानता है। **(तच्च धर्मादिनिमित्तापेक्षम्)** और वह चित्त धर्म आदि निमित्त को अपेक्षित करता है। **(निमित्तं च द्विविधं बाह्यमाध्यात्मिकं च)** और निमिभ्त दो प्रकार का है बाह्य और आध्यात्मिक **(शरीदिसाधनापेक्षं बाह्यं स्तुतिदानाभिवादनादिचित्तमात्राधीनं श्रद्धाद्याप्यात्मिकम्)** शरीर आदि साधन की अपेक्षा रखने वाला बाहरी निमित्त और स्तुति दान अभिवादन आदि चित्तमात्र के अधीन श्रद्धा आदि आध्यात्मिक है। **(तथाचोक्तं– ये चैते मैत्र्यादयो व्यायिनां विहारास्ते बाह्यसाधननिरनुग्रहात्मानः प्रकृष्टं धर्ममभिनिवर्तयन्ति)** ऐसा कहा भी है–जो ये मैत्री करुणा आदि ध्यानियों के सेवनीय उपचार हैं वे बाहरी साधनों के अवश्य अनुसरण करने वाले हैं वे उत्तम धर्म को सिद्ध करते हैं। **(तयोर्मानसं बलीयः)** उन दोनों में मानस =आध्यात्मिक बलवान है। **(कथम्, ज्ञानवैराग्ये केनातिशय्येते, दण्डाकरन्यं**

च चित्तबलव्यतिरेकेणकः शरीरेण कर्मणा शून्यं कर्तुमुत्सहेत समुद्रमगस्त्यवद्वा पिबेत्) क्योंकि ज्ञान, वैराग्य किस बाधक से दबाये जा सकते हैं? चित्त बल आध्यात्मिक बल के अतिरिक्त शारीरिक कर्म से दण्डकारण्य को कौन शून्य करने का साहस कर सके या समुद्र को अगस्त्य जैसे कौन पी सके।

भाष्य का भावार्थ– वासना अनादि हैं क्योंकि मैं सदा रहूँ मेरा विनाश कभी न हो ऐसे अपने कल्याण की इच्छा प्राणिमात्र को होती है सो यह इच्छा स्वाभाविक है क्योंकि इस ही क्षण में उत्पन्न हुआ जो जन्तु है उसको भी मरने का भय होता है, यदि उसने मरने का दुःख भोगा नहीं तो उसे भय क्यों हुआ? उसके भय होने से सिद्ध होता है कि वासना अनादि हैं, उन अनादि वासनाओं से भरे हुए चित्त में किसी निमित्त को पाकर वही वासना पुरुषों के भोग का कारण हो जाती है। चित्त दीपक के समान है उसे प्रकाश करने को जितना अवकाश मिलेगा उतना ही वह प्रकाशित होगा। इससे कोई 2 मानते हैं कि चित्त शरीर के अनुसार ही प्रकाश करता है परन्तु उसकी शक्तियों का संकोच और विकास होता है। चित्त के संकोच और विकास का निमित्त धर्मादि हैं। निमित्त वा कारण दो प्रकार के होते हैं–एक बाह्य और दूसरा आध्यात्मिक। जिसमें बाह्य शरीरादि साधनों की आवश्यकता हो वे दान और शिष्टवन्दनादि बाह्य हैं और दूसरा वह है जिसमें केवल चित्त वृत्तियों की ही अपेक्षा हो जैसे श्रद्धादि। इन दोनों में से मानसिक बलवान है क्योंकि ज्ञान और वैराग्य से अधिक कोई नहीं है। शारीरिक कर्म से कौन दण्डकारण्य को उजाड़ सकता है और अगस्त्य के समान समुद्र को कौन सुखा सकता है अभिप्राय यह है कि ज्ञान और वैराग्य से सुख प्राप्त होता है, भोग से नहीं।

हेतुफलाश्रयालम्बनैः सङ्गृहीतत्वारदेषामभावे तदभावः।। 11 ।।

पदार्थ– (हेतुफलाश्रयालम्बनैः) हेतु, फल, आश्रय तथा आलम्बन इन चारों के द्वारा (संगृहीतत्वात्) वासनाओं का संग्रह होने से (एषाम्, अभावे) इनके अभाव से (तदभावः) वासनाओं का अभाव हो जाता है।

भाष्यानुवाद– **(हेतु धर्मासुखमधर्माद्दुःखं सुखाद्रागो दुःखाद्द्वेषस्ततश्च प्रयत्नस्तेन मनसा वाचा कायेन वा परिस्पन्दमानः परमनुगृह्वात्युपहन्ति वा ततः पुनर्धर्माधर्मा सुखदुःखे रागद्वेषाविति प्रवृत्तमिदं षडरं संसारचक्रम्)** हेतु अर्थात् धर्म से सुख अधर्म से दुःख, सुख से राग दुःख से द्वेष। उनसे प्रयत्न उस प्रयत्न द्वारा मन वाणी या शरीर से दौड़ धूप करता हुआ दूसरे को अपनाता है अथवा नष्ट करता है। उससे फिर धर्म अधर्म सुख दुःख रागद्वेष इस प्रकार यह छः अरेवाला संसार चक्र है। **(अस्य च प्रतिक्षणमावर्त्तमानस्याविद्या नेत्री मूलं सर्वक्लेशानानित्येष हेतुः)** और प्रतिक्षण घूमते हुए इस चक्र की नेत्री चलाने वाली अविद्या है जो सब क्लेशों का मूल है, यह 'हेतु' हुआ। **(फलं तु यमाश्रित्य यस्य प्रत्युत्पन्ना धर्मादेः न ह्यपूर्वोपजनः)** जिसको आश्रय बना जिस किसी भी धर्म आदि की वर्तमानता है। कोई अपूर्व उत्पत्ति नहीं उसे 'फल' कहते हैं। **(मनस्तु साधिकारमाश्रयो वासनानाम्)** 'आश्रय' का अर्थ है– वासनाओं का साधिकार, अर्थात् गुणों के व्यवहार से युक्त मन। **(मन ह्यवसिताधिकारे मनसि निराश्रया वासनाः स्थातुपुत्सहन्ते)** समाप्तगुणाधिकार वाले चित्त में वासनाएं निराश्रय ठहरने को

समर्थ नहीं होती हैं। **(यदभिमुखीभूतं वस्तु यां वासनां व्यनक्ति तस्यास्तदालम्बनम्)** जो उपस्थित वस्तु जिस वासना को व्यक्त करती हैं वह उसका 'आलम्बन' है। अर्थात् आलम्बन वह है वासना जिसको सम्मुख कर प्रकट हो। **(एवं हेतुफलाश्रयालम्बनैरेतैः संगृहीताः सर्वाः वासना)** इस प्रकार उन हेतु, फल और आश्रय के आलम्बन से संगृहीत हुई सब वासनाएं हैं। **(एषामभावे तत्संश्रयाणामपि वासनानामभावः)** इनके अभाव में उनके अधीन होने वाली वासनाओं का भी अभाव हो जाता है।

संगति– (नास्त्यसतः सम्भवः, न च सतो विनाश इति द्रव्यत्वेन सम्भवन्त्यः कथं निवर्तिष्यन्ते वासना इति) अविद्यमान का प्रादुर्भाव या प्रकटीभाव नहीं होता है, और न विद्यमान का विनाश होता है, अतः द्रव्यभाव से वासनाएँ होती हुईं कैसे निवृत्त हो जाएंगी?–

भाष्य का भावार्थ– तात्पर्य यह है कि अविद्या वासनाओं का 'हेतु'और जिस उद्देश्य से धर्माधर्म किये जाते हैं वह 'फल' तथा साधिकार मन 'आश्रय' और जिस वस्तु विषयक वासना होती है वह 'आलम्बन' है, इस प्रकार इन चारों से वासनायें संग्रहीत होती हैं। जब विवेकख्याति के उदय होने से अविद्या का नाश हो जाता है तब हेतु आदि चारों का भी अभाव हो जाता है और इनके अभाव होने से वासनाओं का भी अभाव हो जाता है। योगशास्त्र में तो सत्कार्यवाद माना गया है फिर वासनाओं का नाश कैसे हो सकता है? उत्तर–

अतीतानागतं स्वरूपतोऽस्त्यवभेदाद्धर्माणाम्।। 12।।

पदार्थ– (धर्माणाँ, अध्यभेदात्) महत्तत्त्वादि पदार्थों के कालभेद से (अतीतानागतं) भूत भविष्यत् वस्तु (स्थरुपतः) अपने स्वरूप से (अस्ति) विद्यमान रहती है।

भाष्यानुवाद– (भविष्यद्व्यतिकमनागतमनु भूतव्यक्तिकमतीतं स्वव्यापारोपारूढं वर्तमानं, त्रयं, चैतद् वस्तु ज्ञानस्यज्ञेयम्) भविष्य में होने वाली व्यक्ति 'अनागत' है, अनुभव में आ चुकी वस्तु 'अतीत' है और अपने व्यापार में आरूढ़ हुई वस्तु 'वर्तमान' है। ये तीनों वस्तु ज्ञान का ज्ञेय है। **(यदि चैतत्स्वरूपतो नाभविष्यन्नेदं निर्विषयं ज्ञानुमत्त्पद्यते)** यदि ये स्वरूप से न हों तो यह निर्विषय होने के कारण ज्ञान उत्पन्न नहीं हो सकता। **(तस्मादतीतानागतं स्वरूपतोऽस्तीति)** उससे अतीत और अनागत स्वरूप से हैं। **(भोगभागीयस्य याऽपवर्ग भागीयस्य वा कर्मणः फलमुत्पिपत्सु यदि निरुपाख्यमिति तदुद्देशेन तेन निमित्तेन कुशलानुष्ठानं न युज्येत)** भोगभागीय या अपवर्ग–भागीय कर्म के फल को उत्पन्न करने में उत्सुक ज्ञान निरुपाख्य अवर्णतीय होता है। अतः वह उद्देश्य से उस निमित्त से कुशल का अनुष्ठान नहीं हो सकता। **(सतश्च फलस्य निमित्तं वर्तमानोकरणो समर्थ नापूर्वोपजने)** विद्यमान फल का निमित्त वर्तमान रूप देने में समर्थ होता है। अपूर्व–अवस्तु रूप से रहते हुए के उपजाने में नहीं **(सिद्धं निमित्तं नैमित्तिकस्य विशेषानुग्रहणं कुरुते नापूर्वमुत्पादयतीति)** सिद्ध निमित्त और नैमित्तिक के विशेष रूप को अनुगत करता है, अपूर्व को उत्पन्न नहीं करता है।

(धर्मी चानेकर्धर्मस्वभावस्तस्य चाध्वभेदेन धर्माः प्रत्यव स्थिताः) और धर्मी अनेक धर्मों को रखने के स्वभाव वाला होता है उसके मार्गभेद से धर्म वर्त्तमान हैं **(न च यथा वर्त्तमानव्यक्तिविशेषापन्न**

द्रव्यतोऽस्त्येवमतीतमनागतं च) और जैसे वर्त्तमान व्यक्ति विशेष को प्राप्त द्रव्य रूप है ऐसे अतीत और अनागत नहीं है। **(कथं तर्हि स्वेनैव व्यंग्येन स्वरूपेणानागतमस्ति)** कैसे फिर?-अपने व्यक्त होने वाले स्वरूप से अतीत है। **(वर्त्तमानस्वैवाध्वनः स्वरूपव्यक्तिरिति न सा भवत्यतीतानागतपोरध्वनोः)** वर्त्तमान अध्वा मार्ग की हो स्वरूप व्यक्ति है वह अतीत अनागत मार्गों की नहीं होती। **(एकस्य चाध्वनः समये द्वावध्वानौ धर्मिसमन्क्षागतौ भवत एवेति नाभूव्या भाव स्त्रयाणामध्वनामिति)** एक मार्ग के समय में 'शेष' दो मार्ग धर्मी 'वस्तु' में युक्त होकर रहते हैं तीनों मार्गों का भाव कोई न होकर नहीं होता किन्तु होकर ही होता है।

भाष्य का भावार्थ– चित्त के दो गुण हैं एक व्यक्त प्रत्यय और दूसरा उदित प्रत्यय। जब मनुष्य इन दोनों गुणों से ऊर्वागत होता है तब इसके चित्त की एकाग्रता होती है और वही एकाग्रता का परिणाम है।

ते व्यक्तसूक्ष्मा गुणात्मानः।। 13।।

पदार्थ– (व्यक्तसूक्ष्माः) भूत, भविष्यत् वर्त्तमान रूप जो अनेक प्रकार के पदार्थ हैं (ते) वह सब (गुणात्मानः) तीनों गुणों का स्वरूप है।

भाष्यानुवाद– (ते खल्वमी त्रयध्वानो धर्मा वर्तमाना व्यक्तात्मानोऽततीतानागताः सूक्ष्मात्मानः षडविशेषरूपाः) पूर्व सूत्र में कहे तीन मार्गों वाले धर्म में वर्त्तमान व्यक्त रूप वाले होते हैं, भूत और भविष्यत् रूप वाले होते हैं। यह छः में समानता है-भिन्नता गुणों के कारण है। **(सर्वमिदं गुणानां सन्निवेशविशेषमात्रमिति परमार्थतो गुणात्मानः)** सब यह गुणों का संगठन विशेष है। अतः वास्तव में गुण रूप ही हैं **(तथा च शास्त्रानुशासनम्)** ऐसे ही शास्त्र का उपदेश है-

गुणानां परमं रूपं न दृष्टिपथमृच्छति।
यत्तु दृष्टिपथं प्राप्तं तन्मायेव सुतच्छकम्।।

अर्थात गुणों का परम रूप नेत्रों से नहीं दीखता है, जो तो दृष्टि पथ भी आता है वह माया जैसा तुच्छ है।

संगति–(यदा सर्वे गुणाः कथमेकः शब्द एकमिन्द्रियनिति) जब सब गुण ही हैं तो कैसे यह कहा जाता है कि एक ही शब्द और एक ही इन्द्रिय है–

परिणामैकत्त्वाद्वस्तुतत्वम्।। 14।।

पदार्थ– (परिणामैकत्वात्) परिणाम की एकता से (वस्तुतत्त्वम्) वस्तु का तत्व विदित होता है।

भाष्यानुवाद– (प्रख्याक्रियास्थितिशीलानां गुणानां ग्रहणात्मकानां करणभावेनैकः परिणामः श्रोत्रमिन्द्रियं ग्राह्यात्मकानां शब्दतन्मात्रभावेनैकः परिणामः शब्दो विषय इति) प्रख्या अर्थात् प्रकाशशील क्रियाशील और स्थिति शील वाले गुणों अर्थात् ग्रहणात्मक होते हुओं 'सत्वरजः तम+ गुणो' का करण-उपकरण भाव से एक परिणाम है। श्रोत्र कान इन्द्रिय है 'उन्हीं गुणों' ग्राह्यरूप होते हुओं का शब्दतत्मात्र

भाव से एक परिणाम शब्द विषय है **(शब्दादीनां मूर्तिसमानजातीयानामेकः परिणामः पृथिवीपरमाणुस्तन्यात्रावयवस्तेषां चैकः परिणामः पृथिवी गौर्वृक्ष पर्वत इत्येवमादिर्भूतान्तरेष्वपि स्नैहीष्ण्यप्रणामित्वावकाशदानान्युपादाय सामान्यमेकविकारारम्भः समाधेयः)** शब्द आदि तन्मात्राएँ जो मूर्ति के समानजातीय हैं उनका एक परिणाम पृथिवी परमाणु तन्मात्रों का अवयव है, और उन पृथिवी परमाणुओं का एक परिणाम पृथिवी, गौ, वृक्ष, पर्वत इत्यादि हैं। अन्य वस्तुओं में भी स्नेह, उष्णता, प्रणामित्व, अवकाश दान धर्मों को लेकर सामान्य से एक विकार का बनना स्थिर समझना चाहिए।

(नास्त्यर्थो विज्ञानविसहचरः अस्ति तु ज्ञानमर्थविसहचरं स्वप्नादौ कल्पितमित्यनया दिशा ये वस्तु स्वरूपमहनुवते ज्ञानपरिकल्पनामात्रं वस्तु स्वप्नविषयोधर्म न परमार्थतोऽतीति य आहुस्ते तथेति प्रत्युपरिस्थस्तितमिदं स्वमाहात्म्येन वस्तु कथमप्रमाणात्मकेन विकल्पज्ञानवलेन वस्तु स्वरूपमुत्सृज्य तदेवापलपन्तः श्रद्धेयवचनाः स्युः) विज्ञान से पृथक् रहने वाला कोई पदार्थ नहीं। ज्ञान तो अर्थ से पृथक् वस्तु है। स्वप्न आदि में कल्पित है इसी रीति से जो वस्तु के स्वरूप को झुठलाते हैं कि ज्ञान परिकल्पनामात्र है वस्तु स्वप्न के समान है, वास्तव में नहीं है ऐसा जो कहते हैं, हाँ वे वैसा कहें, पर अपने गुण से विद्यमान वस्तु अप्रमाण रूप विकल्प ज्ञान बल वस्तु स्वरूप को छोड़कर झुठलाते हुए कैसे श्रद्धा योग्य ये वचन हो सकते हैं।

विशेष– बत्ती, तेल, अग्नि इन तीनों से मिलकर सिद्ध हुए दीपक में 'एकोऽयंदीपः' यह एक दीपक है, ऐसा व्यवहार होता है। इसी प्रकार सम वा प्रधान भाव से परस्पर मिले हुए मृत्तिका, दुग्ध तथा जन्तु आदि अनेक वस्तुओं के एक परिणाम में विरोध होता है, परन्तु पुरुषार्थ को सम्पादन करने के लिए अंगांगिभाव से मिले हुए अनेक सत्त्वादि गुणों का परिणाम एक होने में कोई विरोध नहीं।

वस्तुसाम्ये चित्तभेदात्तयो र्विभक्तः पन्थाः ॥ 15 ॥

पदार्थ– (वस्तुसाम्ये) समान वस्तु होने पर भी (चित्तभेदात्) चित्त व्यवहार के भेद से (तयोः) उन दानों ज्ञान और अर्थ का (विभक्तः पन्थाः) अलग 2 मार्ग हैं।

भाष्यानुवाद– (बहुचित्तालम्बनीभूतनेकं वस्तु साधारणम् तत्खलु नैकचित्तपरिकल्पितं नाप्यनेकचित्तपरिकल्पितं किन्तु स्वप्रतिष्ठम्) बहुत चित्तों का आश्रयीभूत एक सामान्य वस्तु होता है वह एक चित्त से परिकल्पित नहीं और न अनेक चित्तों से परिकल्पित है किन्तु निज प्रतिष्ठा वाला–निज सत्ता वाला है। **(कथं वस्तु साम्ये चित्तभेदात्)** कैसे? वस्तु समान होने पर चित्तों के भिन्न भिन्न होने से **(धर्मापेक्षं चित्तस्य वस्तु साम्येऽपि सुखज्ञानं भवत्यधर्मापेक्षं तत एव दुःखज्ञानमविद्यापेक्षं तत एवं मूढज्ञानं सम्यगदर्शनापेक्षं तत एव माध्यस्थ्यज्ञानमिति)** वस्तु एक होने पर भी चित्त को धर्म के कारण सुख ज्ञान होता है और अधर्म के कारण उसी वस्तु से दुःख ज्ञान होता है। अविद्या के कारण उसी वस्तु से मूढ़ता ज्ञान–मोहरूप ज्ञान और सम्यक्दर्शन के कारण उसी वस्तु के माध्यस्थ–उदासीन ज्ञान होता है **(कस्य तच्चितेन परिकल्पितम्)** किसके चित्त से वह परिकल्पित है **(न चान्यचित्तपरिकल्पितेतार्थेनान्यस्यचि**

तोपरागो युक्तः) अन्य के चित्त से वह परिकल्पित वस्तु के साथ अन्य चित्त का उपराग-लगाव नहीं हो सकता **(तस्माद् वस्तुज्ञानयोर्ग्राह्यग्रहणभेदभिन्नयोर्विभक्तः पन्थाः)** इससे ग्राह्य भेद और ग्रहण भेद के भिन्न होने वाले वस्तु और ज्ञान का अलग-अलग मार्ग है (नानयोः संकरगन्धोऽस्ति) इन दोनों का संकर गन्ध-एक होने का गन्ध भी नहीं है।

(सांख्यपक्षे पुनर्वस्तु त्रिगुणं चलं च गुणवृत्तमिति धर्मादिनिर्मितभेदापेक्षं चित्तैरभिसम्बंध्यते) सांख्य पक्ष में तो वस्तु तीन गुणवाली है और गुणों का व्यवहार चल है, अस्थिर है। धर्म आदि निमित्त की अपेक्षा करके चित्तों से सम्बन्धित होता है। **(निमित्तानु रूपस्य च प्रत्ययस्योत्पद्यमानस्य तेन तेनात्सहाहेतु भवति)** और निमित्त के अनुसार उत्पन्न होने वाले प्रत्यय ज्ञान का उस उस निमित्तता से हेतु होता है। **(केचिदाहुः-ज्ञान सहभूरेवार्थो भोग्यत्वान् सुखादिवदिति)** कुछ लोग कहते हैं-ज्ञान के साथ होने वाला ही अर्थ है भोग्य होने से सुख आदि के समान **(त एतया साधरणत्वं बाधमानाः पूर्वोत्तरक्षणेषु वस्तुरूपमेवापह्नवते)** वे इससे साधारण एकत्व को बाधते हुए पहिले क्षणों में वस्तु के स्वरूप को ही झुठलाते हैं।

भाष्य का भावार्थ- बहुत लोग कहा करते हैं कि बाह्य वस्तु कुछ नहीं है किन्तु अन्तःकरणस्थ विज्ञान ही सब कुछ है क्योंकि यदि बाह्य वस्तु भी कुछ हो तो दोनों में अभेद हो जायेगा। इसका उत्तर यह है कि वस्तु अनेक चित्तों द्वारा कल्पित नहीं है किन्तु ज्ञेयवद् धर्मयुक्त साधारण वस्तु है क्योंकि एक चित्त में निमित्तानुसार अनेक ज्ञान होते हैं। जैसे धर्म से सुख ज्ञान, अधर्म से दुःख ज्ञान अविद्या से मूढ ज्ञान और सम्यग्दर्शन से मध्यस्थ ज्ञान एक ही चित्त में होता है। यदि ज्ञानभेद होता तो एक चिभ्त्त में अनेक ज्ञान होते और एक मनुष्य के ज्ञान का दूसरे के चित्त में आरोप होना भी असम्भव है। इसलिए वस्तु अर्थात् ज्ञेय और ज्ञान का अत्यन्त भेद है। इन दोनों में एकता की गन्ध भी नहीं है। सांख्य के मत में वस्तु त्रिगुणात्मक है व गुण चंचल वृत्ति होते हैं। धर्मादि रूप से ज्ञान के होकर चित्त से सम्बन्ध रखते हैं एवं जैसा निमित्त होता है वैसा ही ज्ञान उत्पन्न होकर आत्मा से संयुक्त होता है। किन्हीं 2 लोगों का यह भी मत है कि ज्ञान के संग ही इन्द्रियों के विषय भी उत्पन्न होते हैं क्योंकि बिना विषयों के ज्ञान किसी रीति से नहीं हो सकता है, जैसे-सुख वा दुःख बिना ज्ञान के नहीं हो सकते और बिना सुख दुःख के ज्ञान किसका होगा।

न चैकचित्ततन्त्रं वस्तु तदप्रमाणकं तदा स्यात्॥ 16॥

पदार्थ- (वस्तु) यथार्थ ज्ञान (एकचित्ततन्त्रं) विज्ञान समय में ही हैं आगे पीछे नहीं (न च) यह ठीक नहीं, क्योंकि (तदप्रमाणकं) जिस समय वह चित्त उस वस्तु से हट जाता है (तदा) उस समय वह वस्तु (किं) क्या (स्यात्) होगी।

भाष्यानुवाद- **(एकचित्ततन्त्रं चेद्वस्तु स्यात् तदा चिभ्त्ते व्यग्रेनिरुद्धे वाऽस्वरूपभेद तेनापरामृष्टमन्यस्या विषयीभूतमप्रमाण कमगृहीतस्वभावकं केनचित् तदानीं किं तत् स्यात्)** योग वस्तु-यथार्थ ज्ञान एक चित्त के अधीन यदि वस्तु हो तो व्यग्र या निरुद्ध चित्त होने पर अस्वरूप ही हो जावेगा।

उससे सम्बन्ध न रखती हुई दूसरे की विषयी भूत न हुई वह वस्तु प्रमाण-हीन एवं गुण धर्म ज्ञान से रहित हुई वह वस्तु उस समय क्या हो सके **(सम्बध्यमानं च पुनश्चित्तेन कुत उत्पद्यते)** और फिर चित्त से सम्बन्ध रखती हुई कहाँ से उत्पन्न हो सकती है **(ये चाप्यनुपस्थिता भागास्ते चास्यमास्पुरेवं नास्ति पृष्ठमित्युदरमपि न गृह्येत)** और जो भी अनुपस्थित भाग हैं वे उसके न बन सकें अर्थात् पृष्ठ नहीं है तो उदर भी न हो सके **(तस्मात् स्वतन्त्रोऽर्थः सर्वपुरुषसाधारणः स्वतन्त्राणि च चित्तानि प्रतिपुरुषं प्रवर्त्तते)** इससे स्वतन्त्र ही प्रत्येक अर्थ है और चित्त भी स्वतन्त्र प्रतिपुरुष प्रवृत्त होते हैं **(तयोः सम्बन्धादुपलब्धि पुरुषस्य भोग इति)** सम्बन्ध उन दोनों को उपलब्धि ही पुरुष का भोग है।

भाष्य का भावार्थ– यदि वस्तु (यथार्थज्ञान) एक चित्त के अधीन हो तो चित्त के व्यग्र या निरुद्ध होने पर उसके स्वरूप का निश्चय कैसे हो? और फिर चित्त के सम्बन्ध होने पर उसकी उत्पत्ति माननी पड़ेगी। तथा जो उसके भाग अनुपस्थित होंगे उनके न होने से उपस्थितों का भी त्याग करना पड़ेगा अर्थात् पृष्ठ नहीं है तो उदर का भी ग्रहण न होगा। इसलिए स्वतन्त्र ही प्रत्येक अर्थ है और स्वतन्त्र ही प्रत्येक पुरुष के चित्त हैं, उनके परस्पर सम्बन्ध से ही भोग की उपलब्धि होती है।

तदुपरागापेक्षित्वात्चित्तस्य वस्तु ज्ञाताज्ञातम्॥ 17॥

पदार्थ– (चित्तस्य तदुपरागापेक्षित्वात्) चित्त का उस ज्ञेय वस्तु के साथ जो उपराग है उसे अपेक्षित करने से (वस्तु ज्ञाताज्ञातम्) वस्तु ज्ञात और अज्ञात होती है।

भाष्यानुवाद– (अयस्कान्तमणिकल्पा विषया अयःसधर्मक चित्तमभिसम्बन्ध्योपरंजयन्ति) विषय अर्थात् ज्ञेय पदार्थ अयस्कान्तमणि चुम्बक पदार्थ के समान होते हैं। लोहे जैसे धर्म वाले चित्त को पाकर उपरंजित करते हैं। **(येन च विषयेणोपरक्तं चित्तं स विषयो ज्ञातस्ततोऽन्यः पुनरज्ञातः)** चित्त जिस विषय से उपरक्त हुआ है वह विषय ज्ञात, दूसरा अज्ञात होता है **(वस्तुनो ज्ञाताज्ञातस्वरूपत्वात्परिणानि चित्तम्)** वस्तु के ज्ञात अज्ञात स्वरूप से चित्त परिणामी है।

संगति– (यस्य तु तदेव चित्तं विषयस्तस्य) जिसके मत में वही चित्त विषय है उसके–

भाष्य का भावार्थ– विषय अर्थात् ज्ञेय पदार्थ चुम्बक पत्थर के समान ओर चित्त लोहे के समान है। उन दोनों का जहाँ संयोग होता है वहाँ विषय चित्त को अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। यद्वा जिस विषय से चित्त का संयोग होता है उसी को फोटो चित्त पर खिंच जाता है और जिसका फोटो चित्त पर खिंचता है उसी का चित्त को ज्ञान होता है और अन्य विषय अज्ञात रहते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि चित्त का स्वभाव अस्थिर है।

सदा ज्ञातश्चित्तवृत्तयस्तत्प्रभोः पुरुषस्या परिणामित्वात्॥ 18॥

पदार्थ– (पुरुषस्य) पुरुष के (अपरिणामित्वात्) अपरिणामी होने से (तत्प्रभोः) चित्त के स्वामी को (चित्तवृत्तयः) चित्त की वृत्तियें (सदा ज्ञाताः) सर्वदा ज्ञात रहती हैं।

भाष्यानुवाद– (यदि चित्तवत्प्रभुरपि पुरुषः परिणामेत्ततस्तद्विषयाश्चित्तवृत्तयः शब्दादिर्विषय–

ऋषि भाष्य– (स्वविषया0) 'प्रत्याहार' उसका नाम है कि जब पुरुष अपने मन को जीत लेता है, तब इन्द्रियों का जीतना अपने आप हो जाता है, क्योंकि मन ही इन्द्रियों का चलाने वाला है।

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम् ॥

पदार्थ– (ततः) प्रत्याहार से (इन्द्रियाणाम् परमावश्यता) इन्द्रियां अत्यन्त वश में हो जाती हैं।

भाष्यानुवाद– **(शब्दादिष्वव्यसनमिन्द्रियजय इति केचित्)** शब्दादि विषयों में अव्यसन–लगाव न होना इन्द्रियजय है, ऐसा कुछ एक कहते हैं **(सक्तिर्व्यसनं व्यस्यत्येनं श्रेयस इति)** आसक्ति को ही विषय कहते हैं क्योंकि वह अभ्यासी को श्रेयस से गिराती है **(अविरुद्धा प्रतिपत्तिर्न्याय्या)** किन्हीं के विचार में शास्त्र–अविरूद्धशास्त्र याके अनुकूल आसक्ति को सिद्धि कहना उचित है **(शब्दादिसम्प्रयोगः स्वेच्छयेत्यन्ये)** शब्द आदि का सेवन स्वेच्छा से हो, न कि विषयों के बल से ऐसा अन्य कहते हैं **(रागद्वेषाभावे–सुखदुःखशून्यं शब्दादिजानमिन्द्रियजय इति केचित्)** राग–द्वेष का अभाव हो जाने पर सुख दुःख से रहित हो शब्द आदि का ज्ञान होना इन्द्रिमजय है, ऐसा जंगीषव्य मुनि कहते हैं **(ततश्च परमा त्वियं वश्यता यच्चित्त–निरोधे निरुद्धानीन्द्रियाणी नेतरेन्द्रियजयवत्प्रयत्नकृतमुपायान्तरमपेक्षन्ते योगिन इति)** तब यह परमावश्यता है जो चित्तनिरोध होने पर इन्द्रियां निरुद्ध हो जाती हैं, इन्द्रियजय के लिये किसी अन्य प्रयत्न या किसी दूसरे उपाय की अपेक्षा योगी नहीं करते हैं।

ऋषि भाष्य– (ततः पर0) तब वह मनुष्य जितेन्द्रिय होके जहाँ अपने मन को ठहराना वा चलाना चाहे, उसी में ठहरा और चला सकता है। फिर उसको ज्ञान हो जाने से सदा सत्य में ही प्रीति हो जाती है, असत्य में कभी नहीं।

उपसंहार

प्रथम पाद में जिस योग का वर्णन किया था उसके ही अंग 'क्लेश नाशक क्रियायोग' का इस द्वितीय पाद में वर्णन किया है। क्लेशों के उद्देश्य, क्लेशों के स्वरूप, क्लेशों के कारण, क्लेशों के उत्पत्तिस्थान और क्लेशों के फल का भी विधिवत् वर्णन किया है। पश्चात् कमोंर् के भेद, कारण, स्वरूप और फल का भी वर्णन कर चुके, फिर कर्मविपाक (फलवासना) का कारण और स्वरूप भी कहा। इसके अनन्तर क्लेशों का हेयत्व (त्याग) और क्लेश बिना ज्ञान के नहीं छूटते हैं और ज्ञान शास्त्र से प्राप्त होता है और शास्त्र इन चारों बातों का बोधक है, यह बताया। हेय (त्यागने योग्य), हेय हेतु, उपादेय और उपादान कारण जिससे उपादेय का ज्ञान होता है इन्हीं चारों बातों का योगशास्त्र में वर्णन है, इस कारण शास्त्र भी चतुर्व्यूह कहाता है। हेय का स्वरूप हान के अतिरिक्त सिद्ध नहीं हो सकता है। इसलिए हान के सहित उक्त चारों बातों का कारणों के सहित वर्णन करके उपादेय का कारण जो विवेकख्याति है उसके कारण अर्थात् (योग के अन्तरंग और बहिरंग साधन स्वरूप) यम आदि के लक्षण और फल का भी वर्णन किया। फिर आसन और धारणादि के परस्पर उपकार्योपकारक (जों एक दूसरे के उपकार को करते हैं अर्थात् परस्पर सहायकारी) भाव कह कर उनमें से प्रत्येक के लक्षण, कारण और फल का वर्णन आदि इस

ही पाद में किया गया है। इससे सिद्ध है कि यम नियमादि से योगी के चित्त में योग का बीज बोया जाता है, आसन और प्राणायाम से उस बीज में अंकुर उत्पन्न होता है, प्रत्याहार से उस पर पुष्प आता है और ध्यान, धारणा तथा समाधि से उस वृक्ष पर फल लगता है। यही इस साधनपाद का संक्षिप्त फलितार्थ हैं।

क्रियायोग, क्लेश, होय, कारण, हान, निदान।
यम नियमादिक कथन कर, किया पाद अवसान।।

इति पातंजले सांख्यप्रवचने योगशास्त्रे द्वितीयः पादः समाप्त॥

अथ तृतीयः विभूति पादः

अवतरण– (उक्तानि पंचबहिरंगाणि साधनानि धारणा वक्तव्या) प्रथम समाधिपाद में समाधि के स्वरूप तथा द्वितीय साधनपाद में योग के साधन रूप आठ अंगों में से यम से लेकर प्रत्याहार पर्यन्त पांच बाहिरी अंग कह दिए हैं, अब तृतीयपाद में विभूति वर्णन करने से पूर्व प्रथम शेष योगांगों में से धारणा का लक्षण करते हैं–

देशबन्धश्चित्तस्य धारणा।। 1 ।।

पदार्थ– (चित्तस्य) चित्त का (देशबन्धः) देशविशेष में स्थिर करना (धारणा) धारणा कहलाती है।

भाष्यानुवाद– (नाभिचक्रेहृदयपुण्डरीके मूर्ध्नि ज्योतिषि नासिकाग्रे जिह्वग्रे इत्यवमाविषु देशुषु बाह्ये वा विषये चित्तस्य वृत्तिमात्रेण बन्ध इति धारणा) नाभिचक्र, हृदयकमल, मूर्धा, ज्योति, नासिका तथा जिह्वा इत्यादि शारीरिक प्रदेशों में या बाहरी विषय में चित्त वृत्तिमात्र से बन्ध अर्थात् बान्धना= लगाना स्थिर करना धारणा है।

ऋषि भाष्य– (देशबंध0) जब उपासनायोग के पूर्वोक्त पांचों अंग सिद्ध हो जाते हैं, तब उसका छठा अंग धारणा भी यथावत् प्राप्त होता है। 'धारणा' उसको कहते हैं। कि मन को चंचलता से छुड़ा के नाभि, हृदय, मस्तक, नासिका और जीभ के अग्रभाग आदि देशों में स्थिर करके, ओंकार का जप और उसका अर्थ जो परमेश्वर है, उसका सम्यक् विचार करना।

विशेष– बाह्य विषय का अभिप्राय यह है कि इन्द्रियों के जो रूपादि स्थूल अर्थात् तन्मात्रा है उनमें चित्त को लगाना भी धारणा शब्द का बाच्य है। आज कल जो हठयोग वाले षट्चक्र भेदन का अभ्यास किया करते हैं वह भी इस ही सूत्र के आभास से करते हैं और थियोसोफिस्ट लोग इस ही सूत्र से बाह्य विषय अर्थात् किसी बिन्दु विशेष वा वस्तु विशेष में चित्त को लगाने का अभ्यास किया करते हैं। परन्तु ये सब क्रियायें योगी को हानि पहुँचाती हैं।

स्वीकार करते हैं। **(कथम्)** कैसे–

भाष्य का भावार्थ– तब चित्त को दूसरे चित्त से बुद्धि को दूसरी बुद्धि से ग्रहण करने में अतिप्रसंगदोष और स्मृतिसंकरदोष होगा क्योंकि जितनी बुद्धि उतने ही अनुभव। तब स्मृति नष्ट होने से स्मरण नष्ट होगा इस प्रकार पुरुष की बुद्धि संवेदी मानकर वैनाशिक लोग गड़बड़ मचाते हैं। कहीं 2 भोक्ता का स्वरूप कल्पना करके अन्याय करते हैं। कोई केवल सत्त्व की कल्पना करके वही सत्व हैं जो इन पांच स्कन्धों को छोड़कर औरों को धारण करता है यह कहकर उन्हीं से फिर भयभीत होते हैं और स्कन्धों की अनुत्पत्ति और विराग के लिये गुरु के घर में ब्रह्मचर्य करें ऐसा मान कर पुनः एक बुद्धि और एक स्मृति न होने से उस भाव को त्याग देंगे और कहेंगे कि सांख्य और योग तो वाद मात्र हैं। ये स्वशब्द से चित्त के भोक्ता पुरुष को ग्रहण करते हैं।

चितेरप्रतिसंक्रमायास्तदाकारापत्तौ स्वबुद्धिसंवेदनम्।। 22।।

पदार्थ– (अप्रतिसंक्रमायाः–चितेः) अविचल–स्वरूप में रहने वाली आत्मा के (तदाकारापत्तौ) चित्ताकार भासना में (स्वबुद्धिसंवेदनम्) स्वबुद्धि का संवेदन–अनुभव होता है।

भाष्यानुवाद– (अपरिणामिनी हि भोक्तृशक्तिरप्रतिसंक्रमा च परिणामिन्यर्थे प्रतिसङ्क्रान्तेव तद्वृत्तिमनुपतति:) भोक्तृ शक्ति =आत्मा परिणाम रहित अविचल है। वह परिणामी चित्त में परिवर्तित जैसी उस चित्त की वृत्ति को अनुसरण करती है। **(तस्याश्च प्राप्त चैतन्योपग्रहस्वरूपाया बुद्धिवृत्तेरनकारिमात्रतया बुद्धि वृत्त्यविशिष्टा हि ज्ञानवृत्तिराख्यायते)** और चैतन्य–आत्मतत्त्व के उपराग =सहयोग से स्वरूप को प्राप्त होने वाली उस बुद्धिवृभ्ति के अनुरूपमात्रता से बुद्धिवृत्ति में अभिन्न ज्ञानवृत्ति प्रसिद्ध होती है **(तथा चोक्तम्)** ऐसा कहा भी है–

न पातालं न च विवरं गिरिणाम।
नैवान्धकारं कुक्षयो नोदधीनाम्।।
गुहां यस्यां निहित ब्रह्म शाश्वतम्।
बुद्धिवृत्तिमविशिष्टां कवयो वेदयन्ते।।

अर्थात् न पाताल को, न पर्वतों के विवर–पौल को, नहीं अन्धकार को और न समुद्रों की तलहटियों को 'अपेक्षित करते हैं' जिस अभिन्नबुद्धिवृत्ति रूप गुहा में ब्रह्म निहित है उसे ही कवि–क्रान्तदर्शी ध्यानी जन अपेक्षित करते हैं–खोजते हैं।

संगति– (अतश्चैतदभ्युपगम्यते–) इसलिये यह माना जाता है–

भाष्य का भावार्थ– भोक्ता की शक्ति परिणाम और गमनागमन से रहित है जो विषय परिणामी और गमनशील हैं उनके साथ चित्त की वृत्ति भी गमन करती है। परन्तु जब बुद्धि चेतन पुरुष के समीप होती है। तब उसकी वृत्ति भी स्थिर हो जाती है तब उस बुद्धि में ईश्वर का यथार्थज्ञान होता है ऐसा ही अन्यत्र भी लिखा है कि ब्रह्म पातालादि में नहीं रहता है, वरन् बुद्धिरूपी गुफा में रहता है।

द्रष्टृदृश्योपरक्तं चित्तं सर्वार्थम्।। 23।।

पदार्थ– (चित्तं) चित्त (द्रष्टृदृश्योपरक्तं) विषय और पुरुष के साथ सम्बन्ध वाला होने से (सर्वार्थम्) अनेक रूप है।

भाष्यानुवाद– (मनो हि मन्तव्येनार्थेनोपरक्तं तत्स्वयं च विषयत्वाद्विषयिणा पुरुषेणाऽत्मीयया वृत्त्याऽभिसम्बद्धं तदेतचित्तमे व द्रष्टृ दृश्योपरक्तं विषयविषयिनिर्भासं चेतनाचेतनस्वरूपापन्नं विषयात्मकमप्यविषयात्मकमिवाचेतनं चेतनमिव स्फटिकमणिकल्पं सर्वार्थमित्युच्यते) मन ही मनन करने योग्य विषय से युक्त होता है और स्वयं वह विषय होने से विषयी पुरुष के द्वारा भी निजी वृत्ति से सम्बन्ध को प्राप्त होता है। ऐसा चित्त ही द्रष्टा आत्मा और दृश्य विषय से संयुक्त हुआ विषय–विषयी के आकार जैसा चेतन–अचेतन स्वरूप को प्राप्त हुआ, तथा विषय रूप होता हुआ भी अविषयरूप जैसा, अचेतन हुआ भी चेतन जैसा स्फटिक मणि के समान सर्वार्थ कहा जाता है 'जैसे स्फटिकमणि के समीप जो जो रंग आते हैं वह उन सब रंगों से अपने को रंजित कर लेती है अर्थात् वैसी ही दीखने लगती है।

(तदनेन चित्तसारूप्येण भ्रान्ताः केचित्तदेव चेतनमित्याहुः) इस चित्त के सारूप्य धर्म से भ्रान्त हुए कुछ लोग वही चेतन है, ऐसा कहते हैं। **(अपरे चित्तमात्रमेवेदं सर्वं, नास्ति खल्वयं गवादिर्घटादिश्च सकारणो लोक इति)** अन्य कुछ जन यह कहते हैं कि चित्त मात्र ही यह सब है, गौ आदि घट आदि साधार पदार्थ नहीं है। **(अनुकम्पनीयास्ते)** वे दया के योग्य हैं–भोले हैं अज्ञानी हैं। **(कस्मात्)** कारण **(अस्ति हि तेषां भ्रान्तिबीजं सर्वरूपाकारनिर्भास चित्तमिति)** उनके सम्मुख भ्रान्ति का बीज सर्वरूपाकारप्रतीतिवाला चित्त है। **(समाधिप्रज्ञायां प्रज्ञेयोऽर्थः प्रतिबिम्बीभूतरतस्याऽऽलबनीभूतत्वा–दन्यः)** समाधि बुद्धि में जानने योग्य विषय प्रतिबिम्बीरूप–प्रकटीभूत हुआ है उसके आलम्बनरूप–आश्रयीभूत होने से अन्य पदार्थ भी हैं। **(स चेदर्थश्चितमात्रं स्यात्कथं प्रज्ञयैवं प्रज्ञारूपमव–धार्यत)** यदि वह पदार्थ चित्तमात्र हो तो प्रज्ञा से ही प्रज्ञारूप निश्चय किया जावे अर्थात् प्रज्ञा जानने का साधन है पर वह अपने को जाने अन्य जानने योग्य कुछ न हो तो तब कैसे वह जानने का साधन ठहरे' **(तस्मात् प्रतिबिम्बीभूतोऽर्थः प्रज्ञायां येनावधार्यते स पुरुष इति)** इससे प्रतिबिम्बभूत या प्रकटीभूत पदार्थ प्रज्ञा में जिसके द्वारा निश्चय किया जावे वह पुरुष है–चेतन है–आत्मा है। **(एवं ग्रहीतृ ग्रहणग्राह्यस्वरूपचित्तभेदात त्रयमप्येतज्जातितः प्रतिभजन्ते ते सम्यकृदर्शनस्तैरधिरगतः पुरुषः)** इस प्रकार ग्रहीता, ग्रहण और ग्राह्य स्वरूप चित्त के भेद से–चित्त कभी ग्रहीता के स्वरूप को लेता है कभी ग्रहण के, कभी ग्राह्य के स्वरूप को धारण करता है। इससे इन तीनों–ग्रहीता, ग्रहण और ग्राह्य को जाति से यथार्थदर्शी–अलग–अलग मानते हैं। **(कुतश्च–)** और कैसे–

भाष्य का भावार्थ– जैसे स्फटिक लाल नहीं होता परन्तु लाल के पास रहने से लाल भान होता है। अतएव चित्त को सर्वार्थ कहते हैं सो इस चित्त के रूप से भूले हुए कहते हैं कि यही पुरुष है दूसरे कहते हैं कि चित्त ही सब कुछ है और कुछ नहीं है ये सब दयापात्र हैं। तत्वदर्शी वही है जो ग्रहीता, ग्रहण और ग्राह्य इनमें जातिगत भेद करते हैं।

तदसंख्येयवासनाभिश्चित्रमपि पदार्थं संहत्यकारित्वात्।। 24।।

पदार्थ– (तत्) वह चित्त (असंख्येयवासनाभिः) नाना वासनाओं से (चित्तम् अपि) वासित हुआ भी (संहत्यकारित्वात्) विषय तथा इन्द्रियों के साथ मिलकर कार्य करने से (परार्थं) पुरुष के लिए हैं।

भाष्यानुवाद– (तदेतच्चित्तमसंख्येयाभि वासनाभिरेव चित्रीकृतमपि परार्थ परस्य भोगापवगार्थ न स्वार्थं संहत्यकारित्वादगृहवत्) वह यह चित्त अगणित वासनाओं से चित्रीकृत भी परार्थ है अर्थात् आत्मा के भोग और मोक्ष के लिए है। अपने लिए नहीं है। दूसरे से सहयोग पाकर कार्य करने वाला होने से या परतन्त्र होने से यह घर के समान है जैसे घर किसी घर वाले रूप के साथ ही उपयुक्त होता है और अपने लिए नहीं **(संहत्यकारिणा चित्तेन न स्वार्थेन भवितव्यं न सुख (सुखचित्तं?) सुखार्थं न ज्ञानं ज्ञानार्थमुभवमप्येतत्परार्थम्)** दूसरे के सहयोग से कार्य करने वाला चित्त स्वार्थ नहीं हो सकता। सुख सुख के लिए नहीं, ज्ञान ज्ञान के लिए नहीं होता। दोनों ही परार्थ–दूसरे के लिए ही होते हैं **(यश्च भोगेनापवर्गेण चार्थेचार्थवान् पुरुषः स एव परो न परः सामान्य मात्रम्)** और जो भोग अपवर्ग रूप अर्थ से अर्थवान् पुरुषआत्मा है वह ही पर है-भिन्न है। वह स्वतन्त्र है, केवल है वह सामान्य मात्र नहीं है **(यत्तु किंचत्परं सामान्यमात्रं स्वरूपेणोदाहरेद् वैनाशिकस्तत्सर्वं संहत्याकारित्वात् परार्थमेव स्यात्)** और वैनाशिक जिस किसी भी दूसरे स्वरूप से सामान्य मात्र का उदाहरण दे वह संहत्यकारी होने से परार्थ ही है **(यस्त्वसौ परो विशेषः स न संहत्यकारी पुरुष इति)** जो तो वह पर विशेष है केवल है वह पुरुष है संहत्यकारी नहीं है।

भाष्य का भावार्थ– यहां शंका यह होती है कि नाना प्रकार की वासनाओं से विचित्र हुए चित्त को ही आत्मा मानना चाहिए, क्योंकि वह वासनायें उसके लिए भोग सम्पादन करती हैं। इसका समाधान यह है कि भित्ति आदि से मिले हुए गृह की भाँति चित्त भी देह इन्द्रियादिकों के साथ मिलकर पुरुष के अर्थ, भोग तथा मोक्ष सम्पादन करने से परार्थ है। स्वार्थ नहीं। इसलिए वह आत्मा नहीं हो सकता। तात्पर्य यह है कि जिसके लिए चित्त भोग तथा मोक्ष सम्पादन करता है वह चित्त से भिन्न भोक्ता ही आत्मा है।

विशेषदर्शिनः आत्मभवभावनाविनिवृत्तिः।। 25।।

पदार्थ– (विशेषदर्शिनः) विशेषदर्शी के-चित्त से पृथक् केवल अपने आत्मतत्व को देखने वाले की (आत्मभावभावनानिवृत्तिः) चित्त एवम् दृश्य विषय में अपनेपन रूप भावनाओं या वासनाओं की निवृत्ति हो जाती है।

भाष्यानुवाद– (यथा प्रावृषि तृणाङ् कुरस्योद्भेदेन तद्बीज सत्ताऽनुमीयते तथा मोक्षमार्गश्रवणेन यस्य रोमहर्षाश्रु पातौ दृश्येते तत्राप्यस्ति विशेषदर्शनबीजमपवर्गभागीयं कर्मभिनिर्वर्तितमित्यनु मीयते) जैसे वर्षा ऋतु में तृणांकर (घास) के उगने से उसके बीज का अनुमान किया जाता है वैसे मोक्ष मार्ग के श्रवण करने से जिस मनुष्य के रोमहर्ष और अश्रुपात हो जावें–रोमांच हो उठे और आँसू बहने लगें तो

उसके अन्दर भी मोक्ष सम्बन्धी विशेष दर्शन का बीज कर्मों से साधित है यह अनुमान किया जा सकता है **(तस्यात्मभावना स्वाभाविकी प्रवर्तते)** उसकी आत्मभाव भावना स्वाभाविक प्रवृत्त होती हैं **(यस्याभावादिदमुक्त स्वभावं मुक्त्वा दोषदेषां पूर्वपक्षे रुचिर्भवत्यरुचिश्च निर्णये भवति)** जिस बीज के अभाव सें इस उक्त स्वभाव को छोड़कर जिन लोगों की पूर्वपक्ष में दोष के कारण रुचि और निर्णय में अरुचि होती है **(तत्रात्मभावभावना–कोऽहमासं कथमहमासं किंस्विदिदं के भविष्याम: कथं वा भविष्याम इति)** उनमें आत्मभावभावना यह है कि मैं कौन था, मैं कैसा था यह क्या है यह कैसा है हम कौन होंगे इत्यादि **(सा तु विशेषदर्शिनो निवर्तते)** वह तो विशेषदर्शी की निवृत्ति हो जाती है **(कुत:)** कैसे? **(चित्तस्यैष विचित्र: परिणाम: पुरुषस्त्वसत्यामविद्यायां शुद्धश्चित्तधर्मैरपरामृष्ट इति)** चित्त का ही यह विचित्र परिणाम है पुरुष तो अविद्या के न रहने पर शुद्ध चित्त धर्मों से सम्बन्ध रहित है **(ततोऽस्यात्मभाव–भावना कुशलस्य निवर्तत इति)** तब इस कुशल पुरुष की आत्मभावभावना निवृत्त हो जाती है।

भाष्य का भावार्थ– यह है कि आत्मा का साक्षात्कार होने से चित्त सम्बन्धी जन्मादिक विचित्र परिणाम के निश्चय से जन्मादि भावना की निवृत्ति द्वारा पुरुष कृतकृत्य हो जाता है।

तदाविवेकनिम्नं कैवल्य प्राग्भारंचितम्।। 26।।

पदार्थ– (तदा) जन्मादि भावना की निवृत्ति होने से (चित्तम्) चित्त (विवेकनिम्नं) विवेक मार्ग को प्राप्त हुआ (कैवल्यप्राग्भारम्) कैवल्य के अभिमुख हो जाता है।

ऋषि भाष्य– (तदा विवेक0) जब सब दोषों से अलग होकर ज्ञान की ओर आत्मा झुकता है, तब कैवल्य मोक्षधर्म के संस्कार से चित्त परिपूर्ण हो जाता है, तभी जीव को मोक्ष प्राप्त होता है। क्योंकि जब तक बन्धन के कर्मों में जीव फँसता जाता है, तब तक उसको मुक्ति प्राप्त होना असम्भव है।

भाष्यानुवाद– (तदानीं यदस्य चित्तं विषयप्राग्भारमज्ञाननिम्नमासेत्सदस्यान्यथा भवति कैवल्यप्राग्भारं विवेकजज्ञाननिम्नमिति) उस समय जो इसका चित्त विषय की ओर बहने वाला या अज्ञान रूप निम्न स्थल वाला था वह इस विशेषदर्शी का उससे अन्यथा हो जाता है। वह केवल मोक्ष की ओर बहने वाला विवेकोत्पन्न ज्ञान रूप निम्न स्थल वाला हो जाता है।

तच्छिद्रेषु प्रत्ययान्तराणि संस्कारेभ्य:।। 27।।

पदार्थ– (तच्छिद्रेषु) विवेक ज्ञान या समाधि के बीच 2 के अवसरों में व्युत्थान–चंचलता (संस्कारेभ्य:) संस्कारों से (प्रत्ययान्तराणि) दूसरे प्रतिभान भी होते हैं।

भाष्यानुवाद– (प्रत्ययविवेकनिम्नस्य सत्त्वपुरुषान्यताख्यातिमात्र प्रवाहिणश्चित्तस्य तिच्छद्रेषु प्रत्ययान्तराणवस्मीति वा ममेति वा जानामीति वा) प्रत्ययविवेक निम्नस्थल वाले–सत्त्व (बुद्धि) और पुरुष के भेद दर्शन मात्र प्रवाह वाले चित्त के उन छिद्रों में दूसरे प्रत्यय–प्रतीतियां–मैं हूँ या मेरा या जानता हूँ आदि हुआ करते हैं **(कुत: क्षीयमाणबीजेभ्य: पूर्वसंस्कारेभ्य इति)** कैसे? उत्तर– क्षीण होते हुए बीज वाले पूर्व संस्कारों से।

हानमेषां क्लेशवदुक्तम्।। 28।।

पदार्थ– (एषाम्) इन व्युत्थान संस्कारों की (हानम्) निवृत्ति (उक्तं) पूर्वाचार्यों ने (क्लेशवत्) क्लेशनिवृत्ति की भांति कथन की है।

भाष्यानुवाद– (यथा क्लेशा दग्धबीजभावा न प्ररोहयमर्था भवन्ति तथा ज्ञानाग्निना दग्धबीजभावः पूर्वसंस्कारो न प्रत्ययप्रसूर्भवति) जैसे अविद्यादि क्लेश जले बीजभाव वाले होकर उगने में समर्थ नहीं होते वैसे ही ज्ञान रूपी अग्नि से जले बीजभाव वाला पूर्वसंस्कार अन्य ज्ञानों को उत्पन्न करने वाला नहीं होता **(ज्ञानसंस्कारास्तु चित्ताधिकारसमामनुशेरत इति न चिन्त्यन्ते)** ज्ञान के संस्कार तो चित्त व्यवहार की समाप्ति के अनुरूप हो जाते हैं अतः उन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्य सर्वथा विवेकख्यातेर्धर्ममेघः समाधिः।। 29।।

पदार्थ– (प्रसंख्यानि, अपि, अकुसीदस्य) विवेक ज्ञान में भी फल की इच्छा से रहित योगी को (सर्वथा, विवेकख्यातेः) निरन्तर विवेकज्ञान के उदय होने से (धर्ममेघः, समाधिः) धर्ममेघ समाधि की प्राप्ति होती है।

भाष्यानुवाद– (यदाऽयं ब्राह्मणः प्रसंख्यानेऽप्यकुसीदस्ततोऽपि न किंचत्प्रार्थयते) जब यह ब्राह्मण-ब्रह्मज्ञानी अभ्यासीआत्मज्ञान हो जाने पर वासना रहित हो जाता है फिर वह कुछ भी इच्छा नहीं करता है **(तत्रापि विरक्तस्य सर्वथा विवेकख्यातिरेव भवतीति संस्कारबीजक्षयान्नास्य प्रत्ययान्त-राण्युत्पद्यन्ते)** उस समय से भी विरक्त हुए की सर्वथा विवेकख्याति निरोध समाधि ही होती है। संस्कार बीजों के क्षय हो जाने से फिर इसके दूसरे प्रत्यय-ज्ञान प्रतीतियां नहीं होती हैं **(तदाऽस्य धममेघो नाम समाधिर्भवति)** तब इसकी 'धर्ममेघ' नाम की समाधि होती है।

ततः क्लेशकर्मनिवृत्तिः।। 30।।

पदार्थ– (ततः) धर्ममेघ समाधि से (क्लेशकर्मनिवृत्तिः) वासना सहित अविद्यादि क्लेश तथा पुण्य पाप रूप कर्म निवृत्त हो जाते हैं।

भाष्यानुवाद– (तल्लाभादविद्यादयः क्लेशाः समूलकाषं कषिता भवन्ति) उस धर्म मेघ समाधि के लाभ से अविद्या आदि क्लेश समूलनाश से नष्ट हो जाते हैं **(क्लेशकर्मनिवृत्तौ जीवन्नेव विद्वान् विमुक्तो भवति)** क्लेशों और कर्मों की निवृत्ति हो जाने पर विद्वान् जीवित ही विमुक्त (जीवन्मुक्त) हो जाता है **(कस्मात् स्मात् विपर्ययो भवस्य कारणम्)** क्योंकि विपर्यय अर्थात् मिथ्याज्ञान संसार का कारण है **(न हि क्षीणविपर्ययः कश्चित्केनचित् क्वचिज्जातो दृश्यत इति)** ज्ञानी पुरुष कोई किसी हेतु से कहीं उत्पन्न हुआ दिखलाई नहीं देता। (हां, जब योगी कैवल्य भोग चुकेगा तब पुनः जन्म लेगा।)

तदा सर्वावरणमलापेतस्य ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पम्॥ 31॥

पदार्थ– (तदा) तब (सर्वावरणमलापेतस्य) सब अविद्यादि बाधकरूप मलों से विहीन (ज्ञानस्य-आनन्त्यात्) ज्ञान की अनन्तता से (ज्ञेयम्–अल्पम्) 'ज्ञेय' जानने योग्य विषय 'अल्प'–तुच्छ हो जाता है।

भाष्यानुवाद– **(सर्वैः क्लेशकर्मावरणैर्विमुक्तस्य ज्ञानस्यानन्त्यं भवति)** सब क्लेशकर्म रूप आवरणों से विमुक्त हुए को अनन्त ज्ञान होता है। **(आवरकेणतमसाऽभिभूतमावृतमनन्तं ज्ञानसत्त्वं क्वचिदेव रजसा प्रवर्तितमुद्घाटितं ग्रहणसमर्थं भवति)** आवरक तमोगुण से आवृत = ढका हुआ ज्ञानसत्त्व किसी अवसर पर रजोगुण से प्रवर्तित उदय किया हुआ ग्रहण करने में समर्थ होता है। **(तत्र यदा सर्वैरावरणमलैरपगतं भवति तदा भवत्यस्यानन्त्यम्)** उस स्थिति में जब सब आवरण मलों से ज्ञान अलग हो जाता है तब उसकी अनन्तता होती है **(ज्ञानस्यानन्त्याज्ज्ञेयमल्पं सम्पद्यते)** ज्ञान की अनन्तता से ज्ञेय–जानने योग्य वस्तु तुच्छ बन जाता है **(यथाऽऽकाशे खद्योतः)** जैसे आकाश में खद्योत–चमकने वाला कीट **(यत्रेदमुक्तं)** जिसके विषय में यह कहा है–

अन्धो मणिमाविध्यतमनंगुलिरावयत्।
अग्रीवस्तं प्रत्यमुंचत् तमजिह्वोऽभ्यूजयत्॥

अर्थात् अन्धे ने मणि को बींधा उसे अंगुलिरहित ने पिरोया उसे बिना गरदन वाले ने पहिना जिह्वाहीन ने उसकी स्तुति की उक्ति लागू हो जावे।

ततः कृतार्थानांपरिणामक्रमसमाप्तिर्गुणानाम्॥ 32॥

पदार्थ– (ततः) धर्ममेघ समाधि के उदय से (कृतार्थानां गुणानाम्) समाप्त व्यवहार हुए गुणों के (परिणामक्रमसमाप्तिः) परिणाम क्रम की समाप्ति होती है।

भाष्यानुवाद– **(तस्य धर्ममेघस्योदयात् कृतार्थानां गुणानां परिणामक्रमः परिसमाप्यते)** उस धर्ममेघ समाधि के उदय से चरितार्थ गुणों का परिणामक्रम समाप्त हो जाता है **(न हि कृतभोगापवर्गाः परिसमाप्तक्रमाः क्षणमप्यवस्थानुमुत्सहन्ते)** भोगों का अन्त कर चुकने वाले समाप्तक्रम वाले गुण क्षणभर भी ठहरने में समर्थ नहीं होते हैं।

संगति– **(अथ कोऽयं क्रमो नामेति–)** अच्छा यह क्रम क्या है–

क्षणप्रतियोगी परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमः॥ 33॥

पदार्थ– (क्षणप्रतियोगी) क्षणों के सम्बन्ध वाली (परिणामापरान्तनिर्ग्राह्यः) तथा परिणाम की प्राप्ति से अनुमान करने योग्य (क्रमः) गुणों की अवस्था विशेष को क्रम कहते हैं।

भाष्यानुवाद– **(क्षणानन्तर्यात्मा परिणामस्यापरान्तेनावसानेन गृह्यते क्रमः)** वर्तमान क्षण के पश्चात् जो काल से परिणाम होता है क्षण के अनन्तर होने वाला परिणाम या उसके अनन्तर जो ग्रहण किया जाता है वह 'क्रम' है। **(नह्यननुभूतक्रमक्षणा नवस्य पुराणता वस्त्रस्यान्ते भवति)** यहाँ शंका होती

है कि पुरानापन वस्त्र के अन्त में नहीं जाना जाता तब 'क्रम' का लक्षण अयुक्त हुआ। **(नित्येषु च क्रमो दृष्टः)** इसका उत्तर यह है-क्रम नित्यवस्तुओं में देखा गया है। **(द्वयी चेयं नित्यता कूटस्थनित्यता परिणामनित्यता च)** यह नित्यता दो प्रकार की है एक कूटस्थनित्यता=एकरस या निर्विकारनित्यता और दूसरी परिणामनित्यता **(तत्र कूटस्थनित्यता पुरुषस्य)** उनमें कूटस्थनित्यता आत्मा की है। **(परिणामनित्यता गुणानाम्)** परिणामनित्यता गुणों-सत्त्वरजतम गुणों की है। **(यस्मिन् परिणाम्यमाने तत्त्वं न विहन्यते तन्नित्यम्)** परिणाम को प्राप्त होती हुई जिस वस्तु में तत्त्व-उसका स्वरूप नष्ट न हो वह वस्तु नित्य है। **(उभयस्य च तत्त्वानभिघातान्नित्यम्)** तत्त्व= निजस्वरूप के नाश न होने से दोनों की नित्यता है। **(तत्र गुणवर्मेषु बुद्ध्यादिषु परिणामपरान्तनिर्ग्राह्यः क्रमो लब्धपर्यवसानो नित्येषु धर्मिषु गुणोष्वलब्धपर्यवसानः)** इसमें यह भी शंका हो सकती है कि जो परिणामी वस्तु है वह नित्य नहीं हो सकती और बुद्धि आदि से अन्तदशा से समझने योग्य क्रम रहता है परन्तु नित्य गुणों में जो क्रम रहता है उसका अन्त होता है इससे ही उनमें क्रमनित्यता रहती है। **(कूटस्थनित्येषु स्वरूपमात्रप्रतिष्ठेषु मुक्तपुरुषेषु स्वरूपास्तिता क्रमेणोवानुभूयत इति तत्राप्यलब्धपर्यवसानः शब्दपृष्ठेनास्तिक्रियासुपादाय कल्पित इति)** कूटस्थ अर्थात् विकाररहित नित्यपदार्थों में जो क्रम रहता है उसका अन्त नहीं होता। जो मुक्त जीव अपने स्वरूप में स्थिर रहते हैं उनके जीव की विद्यमानता क्रम से ही जानी जाती है। क्योंकि जीव की नित्यता भी अन्तरहित होती है।

(अथास्य संसारस्य स्थित्या गत्या च गुणेषु वर्त्तमानस्यास्ति क्रमसमाप्ति र्नवेति) अब यह शंका होती है कि स्थिति और गति से वर्तमान इस संसार की क्रमसमाप्ति है या नहीं? **(अवचनीयमेतत्)** यह अकथनीय है। **(कथम्)** कैसे? **(अस्ति प्रश्न एकान्तवचनीयः सर्वो जातो मरिष्यतीति)** प्रश्न एकांश से उत्तर देने योग्य है कि जो उत्पन्न हुए हैं वे सब मरेंगे। **(अथ सर्वो मृत्वा जनिष्यत इति)** और सब मरकर उत्पन्न होंगे। **(विभज्य वचनीयम्)** खोलकर कहना चाहिये? 'उत्तर में' **(प्रत्युदितख्यातिः क्षीणतृष्णः कुशलो न जनिष्यत इतरस्तु जनिष्यते)** प्रकट हुई विवेकख्याति वाला वासनारहित कुशल जन अर्थात् योगी उत्पन्न न होगा अन्य तो उत्पन्न होंगे। **(तथा मनुष्यजातिः श्रेयसी न वा श्रेयसीत्येवं परिपुष्टे विभज्य वचनीयः पशूनधिकृत्य श्रेयसी देवानृषींश्चाधिकृत्य नेति)** इसी प्रकार यह एक और प्रश्न है कि मनुष्य जाति श्रेष्ठ है या नहीं? इस रूप में तो प्रश्न अनिर्वचनीय रहेगा परन्तु भाग करके प्रश्न वचनीय =उत्तर देने योग्य हो जाता है कि पशुओं की अपेक्षा तो मनुष्य जाति श्रेष्ठ है, देवों और ऋषियों की अपेक्षा से श्रेष्ठ नहीं है। **(अयं त्ववचनीयः प्रश्नः संसारोऽयमन्तवानथानन्त इति)** यह भी अकथनीय है कि यह संसार अन्तवाला (सान्त) है या अन्तरहित (अनन्त) है। **(कुशलस्यास्ति संसारक्रमसमाप्ति र्नेतरस्येतिः अन्यतरावधारणेदोषः)** इसका उत्तर यह है कि कुशल= योगी की संसारक्रम समाप्ति है अन्य की नहीं। अतः संसार को सर्वथा सान्त या अनन्त कहने में एक तरह का दोष है **(तस्माद् व्याकरणीय एवायं प्रश्न इति)** इस कारण यह प्रश्न विवेचनीय है।

पुरुषार्थशून्यानां गुणानां प्रतिप्रसवः कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा वा चितिशक्तिरिति।।34।।

पदार्थ– (पुरुषार्थशून्यानां गुणानाम्) पुरुषार्थ–पुरुष के लिए स्वप्रवृत्ति से शून्य हुए गुणों का (प्रतिप्रसवः कैवल्यम्) कारण में लीन हो जाना कैवल्य है (वा) या (चित्तिशक्तिः स्वरूप प्रतिष्ठा–इति) चित्तिशक्ति–आत्मा का अपने रूप में प्रतिष्ठित हो जाना कैवल्य है।

भाष्यानुवाद– (कृतभोगापवर्गाणां पुरुषार्थशून्यानां यः प्रतिप्रसवः कार्यकारणात्मकानां गुणानां तत् कैवल्यं स्वरूपप्रतिष्ठा पुनर्बुद्धि सत्त्वानभिसम्बन्धात्पुरुषस्य चितिशक्तिरेव केवला तस्याः सदा तथैवावस्थानं कैवल्यमिति) भोगों का सर्वथा अन्त कर चुके हुए पुरुषार्थ शून्य हुए कार्य कारण रूप गुणों का जो कारण में लीन हो जाना है वह कैवल्य है। अथवा बुद्धि सत्त्व के सम्बन्ध से अलग हो पुरुष–आत्मा का अपने रूप में प्रतिष्ठित हो जाना कैवल्य है क्योंकि चित्ति शक्ति ही केवल है उसका सदा वैसा ही बना रहना कैवल्य है।

❁❁❁

200.	कैलाशकुमार सोलंकी, आवासीय कालोनी, मंडी समिति, मथुरा	200/–
201.	निशान्त आर्य, एफ–1203, सैक्टर–77, नौएडा (उ. प्र.)	200/–
202.	बसन्ती देवी 36, पारस अपार्टमेंट पुनदाग रोड, रांची (झारखण्ड)	200/–
203.	विकास शर्मा, संजय कालोनी, धामनोंद, जिला–रतलाम (म. प्र.)	200/–
204.	यशेन्द्र आर्य, सी–217, केदारनगर, शाहगंज आगरा (उ. प्र.)	200/–
205.	नीरज जसनानी, सी–17, चन्द्रलोक कालोनी, जयपुर हाउस, आगरा	200/–
206.	सागर अग्रवाल, मैन बाजार, शाहगंज, आगरा (उ. प्र.)	200/–
207.	सत्यप्रकाश वर्मा, न्यू ज्योति मार्केट, दुकान नं. 3, शाहगंज, आगरा	200/–
208.	श्रीराम अग्रवाल, भोगीपुरा, शाहगंज, आगरा (उ. प्र.)	200/–
209.	सुधीरकुमार आनन्द, डी–32, शंभूकुंज, कमलानगर, आगरा (उ. प्र.)	200/–
210.	सुमित गुप्ता, जी–501, प्लूमेरिया गार्डन स्टेट, ग्रेटर नौएडा	200/–
211.	कृष्णा आर्या, 304, जीवन नगर (हांसी रोड), करनाल (हरि.)	200/–
212.	मामराज आर्य, गाँव–दहा जागीर, पोस्ट मधुवन, जिला–करनाल (हरि.)	200/–
213.	डॉ0 रहतुलाल आर्य, म, नं. 138, गली नं. 2, शान्तिनगर, करनाल (हरि.)	200/–
214.	गोपालसिंह आर्य, 11/685, आर्य मशीनरी स्टोर, नाबल्टी रोड, करनाल	200/–
215.	अनुराधा कम्बोज, म, नं. 1887, सैक्टर–4, पार्ट–2, करनाल (हरि.)	200/–
216.	सतपालसिंह आर्य, म, नं. 11/735, दयालपुरा, करनाल (हरि.)	200/–
217.	सी. पी. आर्य एडवोकेट, गुजरात कालोनी चास, जिला–बोकारो (झारखण्ड)	200/–

❁❁❁

आवश्यक सूचना

'तपोभूमि' पत्रिका के पाठकों पर बकाया राशि की सूची तैयार की गई है- अपना नाम व पता देखकर वार्षिक शुल्क 31 अगस्त 2022 तक अवश्य जमा करादें। अन्यथा शुल्क प्राप्त न होने पर पत्रिका भेजनी बन्द कर दी जायेगी। नगद राशि जमा कराने वाले महानुभाव **सत्य प्रकाशन कार्यालय** में जमा करायें, और जो बाहरी व्यक्ति हैं वे बैंक खाते में शुल्क जमा करायें और तुरन्त ही सूचित करने की कृपा करें।

–धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या–

इण्डियन ओवरसीज बैंक

शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा

I F S C Code- IOBA 0001441

'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या–144101000002341

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
1.	योगेशकुमार गर्ग, आनन्दलोक कालोनी, मथुरा (उ. प्र.)	500/–
2.	मुसाफिराम आर्य, उरमौरा (उ प्र.)	200/–
3.	कृष्णवीरसिंह, नगला पतुआ (उ. प्र.)	200/–
4.	मंत्री आर्यसमाज, औरंगनगर (उ. प्र.)	500/–
5.	सिलेटसिंह यादवार्य, महुआखेड़ा (उ. प्र.)	500/–
6.	जीवनसिंह आर्य, साधु आश्रम, अलीगढ़	350/–
7.	धनीराम साहू, पसवारा (उ. प्र.)	200/–
8.	नरेशपाल आर्य, चन्दोई (उ. प्र.)	200/–
9.	रामभरोसेलाल गुप्ता, बयाना (राज.)	350/–
10.	प्रतापनारायण पाण्डेय, रेहुआमंसूर (उ. प्र.)	500/–
11.	दीवानसिंह आर्य, जटौली (हरि.)	350/–
12.	हुकुमचन्द, बगड़ीपुरा (म. प्र.)	350/–
13.	नन्नूमल वेदप्रकाश आर्य, काशीरामनगर, कासगंज (उ. प्र.)	200/–
14.	दीनानाथ वर्मा, टैगोरनगर, रायपुर (छत्तीसगढ़)	200/–
15.	केशवकुमार, दीघोट (हरि.)	350/–
16.	राजेन्द्रप्रसाद शर्मा, सरधना (उ. प्र.)	500/–
17.	उदयपालसिंह यादव, सौरिख–कन्नौज	200/–
18.	डॉ0 महेशचन्द गुप्त आर्य, कंचौसी (उ. प्र.)	350/–
19.	बलवीर, खायरा–मथुरा	200/–

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
20.	पूरनसिंह आर्य, सहार-मथुरा	200/-
21.	यशपालसिंह, धरौली (उ. प्र.)	500/-
22.	हरिशचन्द्र वानप्रस्थी, ग्राम-उस्फार, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
23.	पूर्णानन्द, फरीदाबाद (हरि.)	350/-
24.	सोहनलाल शास्त्री, तसई (राज.)	200/-
25.	पूर्णानन्द, पर्वतीया कालोनी, फरीदाबाद (हरि.)	350/-
26.	सोहनलाल शास्त्री, ग्राम व पोस्ट-तसई, जिला-अलवर (राज.)	200/-
27.	रेवतीप्रसाद आर्य, हिन्डौनसिटी (राज.)	500/-
28.	योगेशकुमार विनोदकुमार अग्रवाल, नौहझील (उ. प्र.)	500/
29.	उमेशकुमार वर्मा एडवोकेट, बेहटागोकुल (उ. प्र.)	500/-
30.	ललित आर्य, 155, नवलपुरा, खुर्जा, जिला-बुलन्दशहर (उ. प्र.)	200/-
31.	हुकमसिंह आर्य, नगलामुड़िया (गंगपुर), जिला-कासगंज (उ. प्र.)	200/-
32.	सुभाषचन्द्र, ग्राम-कमलपुरा, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
33.	सुरेन्द्रसिंह, लोहियानगर (उ. प्र.)	200/-
34.	भीमसिंह आर्य, रान्हेरा-मथुरा	200/-
35.	मानसिंह आर्य, मान मन्दिर, गोरमी (म. प्र.)	200/-
36.	नवीन शर्मा, शिववालानाथ नगर-मथुरा	350/-
37.	मेवालाल गुप्ता, मुंडेरा (उ. प्र.)	350/-
38.	आर्य कन्या गुरुकुल ट्रस्ट, हसनपुर (हरि.)	200/-
39.	मास्टर खिलौनीसिंह, नगलाखारी-मथुरा	200/-
40.	विजयलक्ष्मी, शहदपुर कासिमपुर-मथुरा	200/-
41.	भैरुलाल मीना, सुजानपुरा (बस्सी) राज.	500/-
42.	धर्मेन्द्रसिंह, बादली (हरि.)	650/-
43.	महावीर उर्फ बच्चू, माधुरीकुण्ड-मथुरा	200/-
44.	आचार्य रणवीरसिंह आर्य, ग्राम-नगला केहरी, जिला-इटावा (उ. प्र.)	200/-
45.	नत्थीसिंह सुपुत्र श्री बेनीसिंह, ग्राम व पोस्ट-नौगांव, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
46.	रमेश तंवर, हमालों की बाड़ी, बीकानेर (राज.)	350/-
47.	शिवचरन आर्य, ग्राम व पोस्ट-लीखी, जिला-पलवल (हरि.)	200/-
48.	नरेन्द्र मधु यादव आर्य, तूलेड़ा (राज.)	500/-
49.	ऋषिपाल कसाना, कुनकुरा (उ. प्र.)	500/-

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
50.	जितेन्द्र तायल, फरीदाबाद (हरि.)	350/-
51.	अरूणकुमार उपाध्याय, गोरमी (म. प्र.)	200/-
52.	लालमणि आर्य, पडरी-बलिया (उ. प्र.)	500/-
53.	ओमप्रकाश आर्य अध्यापक, रांचीबांगर-मथुरा	650/-
54.	यशपालसिंह, ऊँचागाँव-मथुरा	500/-
55.	यमुनाकुमारसिंह, देवीपुरा, मथुरा	200/-
56.	तारासिंह वरिष्ठ अध्यापक, आकवा (राज.)	500/-
57.	सलेकचन्द प्रधान, नगलाराठी (उ. प्र.)	500/-
58.	अवनीशकुमार आर्य, सहारनपुर (उ. प्र.)	500/-
59.	ध्यानवीरसिंह, शाहवर गेट, कासगंज (उ. प्र.)	650/-
60.	कप्तानसिंह, नयागांव, जिला-भरतपुर (राज.)	500/-
61.	सोमेश्वर, सूर्यनगर-मथुरा (उ. प्र.)	500/-
62.	नाथामल सैनी, कुरल्ली, जिला-सीकर (राज.)	650/-
63.	राकेशचन्द्र आर्य, ढंढेरुआ, जिला-बरेली (उ. प्र.)	200/-
64.	रामनिवास आर्य, ग्राम-खल्लपुर, जिला-बरेली (उ. प्र.)	200/-
65.	अम्बरीश कुमार लोहिया, गांधी चौक, फतेहाबाद (उ. प्र.)	200/-
66.	डॉ0 रामदेवसिन्हा शास्त्री, मिश्रौलिया, जिला-समस्तीपुर (बिहार)	500/-
67.	भगवानसिंह, बघाना खुर्जा, (उ. प्र.)	350/-
68.	भूपेश भारद्वाज, लक्ष्मीनगर-मथुरा (उ. प्र.)	350/-
69.	मनीराम यादव, जाजोरवास (राज.)	500/-
70.	देवेन्द्र, ग्राम-वली, पोस्ट- टटीरी मण्डी, जिला-बागपत (उ. प्र.)	500/-
71.	पन्नालाल वर्मा, कोहनगांव-मथुरा (उ. प्र.)	500/-
72.	महेन्द्रसिंह आर्य, कचौरा-आगरा (उ. प्र.)	200/-
73.	दीवानसिंह आर्य, कचौरा-आगरा (उ. प्र.)	500/-
74.	सुनीलकुमार गहलौत, ताजगंज-आगरा (उ. प्र.)	650/-
75.	महाराजसिंह आर्य, शिवनगर, मोदीपुरम्-मेरठ	350/-
76.	सीताराम आर्य, पीपरा, जिला-सिवान (बिहार)	350/-
77.	जयदेवसिंह, नगलाकलुआ, जिला-एटा (उ. प्र.)	500/-
78.	सूरजदेवप्रसाद, बाढ़, जिला-पटना (बिहार)	500/-
79.	काशीनाथसिंह, जगदेवनगर (बिहार)	200/-

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
80.	सुरेन्द्रसिंह यादव, जवाहर नगर, विधूना (उ. प्र.)	500/-
81.	डॉ0 जयनारायण आर्य, अकबरपुर, कानपुर देहात (उ. प्र.)	200/-
82.	हरिओम मिश्रा, रिहन्दनगर, बीजपुर (उ. प्र.)	650/-
83.	श्रीकृष्ण आर्य (बीमा वाले), जलालाबाद (उ. प्र.)	650/-
84.	रघुनन्दन आर्य, नगलाखना, जिला–कासगंज (उ. प्र.)	650/-
85.	अशोक आर्य, पोस्ट–छाता, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	350/-
86.	महेन्द्रकुमार, मऊनाथ भंजन, जिला–मऊ (उ. प्र.)	650/-
87.	हेमराजसिंह, नौगाँव, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	500/-
88.	लवकुश आर्य, लोरियापट्टी, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	500/-
89.	डॉ0 भूदेव शर्मा, पुरामना, जिला–आगरा (उ. प्र.)	650/-
90.	हरिओम आर्य, धौलीप्याऊ–मथुरा (उ. प्र.)	500/-
91.	मुकेश आर्य, शेखपुरा–पलवल (हरि.)	500/-
92.	राजेन्द्रसिंह, डकोरा, जिला–पलवल (हरि.)	500/-
93.	आशुतोष मिश्रा, मखदूम–फरह, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	200/-
94.	गजेन्द्रसिंह, पुष्पांजलि द्वारिका, टाउनशिप–मथुरा	350/-
95.	प्रेमपालसिंह आर्य, शेखूपुर, जिला–बुलन्दशहर (उ. प्र.)	500/-
96.	अरूणकुमार सोनी, इस्पातनगर, भिलाई (म. प्र.)	500/-
97.	आर्य महेशचन्द्र, फेस–3, गुरुग्राम (हरि.)	500/-
98.	सोमिन्द्रपाल, खेड़ला, जिला–गुरुग्राम (हरि.)	500/-
99	दयानन्द शास्त्री एड शाकुन्तल संस्थानम्, बंशीगोहरा	500/-
100.	कपिल शर्मा, बुढ़ाना, जिला–मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)	500/-
101.	इन्द्रपाल आर्य, बढ़ौत, जिला–बागपत (उ. प्र.)	500/-
102.	उदयवीरसिंह, सुखरावली जिला–अलीगढ़ (उ. प्र.)	500/-
103.	रणवीरसिंह आर्य, ऊँचागाँव, जिला–हाथरस (उ. प्र.)	500/-
104.	अविरल, आयुष भैया आर्य, लालसोट (राज.)	500/-
105.	चन्द्रभान शर्मा, लोचीनगला, जिला–बदायूँ (उ. प्र.)	500/-
106.	साकेतभूषण तिवारी, विरवा (चौरिहनपुरवा) उ. प्र.	350/-
107.	गजानन्द राठौड़, बड़ौदा रोड, श्योपुर (म. प्र.)	500/-
108.	तरूण अग्रवाल, बाजना, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	500/-
109.	दयानन्द आर्य कन्या महाविद्यालय एवं जे कालेज जरी पाटका, नागपुर (महा.)	500/-

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
110.	पं. सुरेन्द्रकुमार आर्य, रामगढ़ी (मथुरा) उ. प्र.	350/-
111.	डॉ0 रामकुमारी, महावीरगंज-औरैया (उ. प्र.)	200/-
112.	प्रमोद आर्य, सिकरौल, वाराणसी (उ. प्र.)	350/-
113.	लोधीराम सनेही आर्य, लोधीपुरम्, पीपलअड्डा, एटा (उ. प्र.)	350/-
114.	विजयसिंह यादव, सिहारी लद्दा, मुरादाबाद	350/-
115.	रविप्रकाश आर्य, प्रिंसनगर, अलीगढ़ (उ. प्र.)	350/-
116.	प्रधान/मंत्री आर्यसमाज, औरैया (उ. प्र.)	350/-
117.	सन्तराम आर्य, जिताका, जिला-बुलन्दशहर (उ. प्र.)	350/-
118.	हरिनाथ आर्य, अकबरपुर, जिला-अलवर (राज.)	200/-
119.	हेमेन्द्रकुमार लखन अग्रवाल, माधवपुरी-मथुरा	350/-
120.	मनमोहन तिवारी, पण्डित रासबिहारी तिवारी मार्ग, लखनऊ (उ. प्र.)	350/-
121.	नरसीलाल शास्त्री, कुमरौआ (कासगंज) उ. प्र.	200/-
122.	मंजूदेवी, आर. आर. सी. ए. टी. कालोनी, इन्दौर (म. प्र.)	200/
123.	पंकजकुमार आर्य लक्ष्मणपुरम् कालोनी, अलीगढ़ (उ. प्र.)	350/-
124.	इन्द्रपालसिंह, शान्तीनगर, एटा (उ. प्र.)	200/-
125.	श्यौदानसिंह आर्य, सरोजनगर, बाईपास रोड, अलीगढ़ (राज.)	200/-
126.	शर्मा मोटर वर्कशाप, ग्राम व पोस्ट-पहाड़ी, जिला-भरतपुर (राज0)	200/-
127.	हरिशरण आर्य, सुपुत्र श्री राममुनि, कैमथल, जिला-अलीगढ़ (राज.)	200/-
128.	आर्यसमाज मन्दिर, मुरैना, बिजलीघर के सामने, मुरैना (म. प्र.)	200/-
129.	राजकमलसिंह तोमर, गम्भीर का पुरा, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
130.	जयेन्द्र शर्मा (राजू), चाँद का पुरा, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
131.	सौमित्रसिंह, कृपे का पुरा, जिला-भिण्ड (म. प्र.)	200/-
132.	डॉ. विजयसिंह तोमर, अमिल्हेड़ा (अम्बाह), जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
133.	महेश गिरि, कोलुआ, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
134.	गजेन्द्रसिंह तोमर, चाँद का पुरा, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
135.	रामनरेश सिंह तोमर, पुलिस क्वार्टर, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
136.	सूर्यनारायण शर्मा, बम्बा अटेर रोड, पोरसा, जिला-मुरैना (म. प्र.)	200/-
137.	शशि गोयल, स्वर्ण पथ, मान सरोवर, जयपुर (राज.)	200/-
138.	राकेश तिवारी, ताजगंज-आगरा (उ. प्र.)	200/-
139.	डॉ. मुकेश कुमार, धनौली, जिला-आगरा (उ. प्र.)	200/-

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
140.	आचार्य शान्तीप्रकाश शास्त्री, धनौली, जिला–आगरा (उ. प्र.)	200/–
141.	बेनीराम फौजी, राधाबिहार कालोनी, मुरैना (म. प्र.)	200/–
142.	रविप्रकाश शर्मा, अम्बाह, जिला– मुरैना (म. प्र.)	200/–
143.	मुन्ना मिस्त्री, ग्राम व पोस्ट–नावली बड़ागाँव , जिला–मथुरा (उ. प्र.)	200/–
144.	जबरसिंह आर्य, रूंध का पुरा, जिला–मथुरा (उ. प्र.)	200/–
145.	राकेश राजपूत, सिरमहती, जिला–मुरैना (म. प्र.)	200/–
146.	अरविन्द गुप्ता, हनुमान नगर, जिला–ग्वालियर (म. प्र.)	200/–
147.	विक्रमसिंह वर्मा, लोधीपुरम् (पीपल अड्डा), एटा (उ. प्र.)	200/–
148.	मनोज खुराना, दयाल बाग, आगरा (उ. प्र.)	200/–
149.	डॉ. राजवीर आर्य, पानीपत (हरि.)	200/–
150.	वीरेन्द्रसिंह तोमर, मुरैना रोड, अम्बाह, जिला–मुरैना (म. प्र.)	200/–
151.	विन्दाप्रसाद (पूर्व प्रधान), धुन्धपुर, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
152.	महिपाल सुपुत्र खैरापाल, धुन्धपुर, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
153.	पवन आर्य, गाँव– मोहर, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
154.	सुशील कुमार आर्य, गाँव– मोहर, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
155.	चन्द्रमोहन साहू, इन्द्रानगर, बाँदा (उ. प्र.)	200/–
156.	पुरुषोत्तमदास गुप्ता, तिन्दवारी रोड, बाँदा (उ. प्र.)	200/–
157.	राजेन्द्रपाल, सुकुल कुआँ, बाँदा (उ. प्र.)	200/–
158.	प्रधान आर्यसमाज बाँदा, वलखण्डी नाका, बाँदा (उ. प्र.)	200/–
159.	ज्योतिप्रकाश गोयल, डाल्टनगंज, पलामूँ (झारखण्ड)	200/–
160.	सुकेतुभूषण सुधीरकुमार गर्ग, घिरोर, जिला–मैनपुरी (उ. प्र.)	200/–
161.	उमेश आर्य, चाँद थोक, पेलानी रोड, सुमेरपुर, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
162.	डॉ. विवेक आर्य, पंधरी, जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
163.	गंगादीन आर्य, पढोरी (आनन्दपुर), जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
164.	राम अवतार आर्य, पढोरी (बजरंगी डेरा), जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
165.	अच्छेलाल आर्य, पढोरी (आनन्दपुर), जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
166.	बरदानीसिंह आर्य, पढोरी (बजरंगी डेरा), जिला–हमीरपुर (उ. प्र.)	200/–
167.	दिनेशचन्द्र आर्य, अमन शहीद, हमीरपुर (उ प्र.)	200/–
168.	स्वामी वेदानन्द सरस्वती, आर्य समाज बदले सिमनापुर, जिला–कानपुर देहात	200/–
169.	अरविन्द कुमार एवं श्रीमती अपर्णा, थापरनगर, मेरठ (उ. प्र.)	200/–

क्रमांक	नाम व पता	बकाया राशि
170.	मांगेराम आर्य, एम. ई. एस. कालोनी, रूड़की रोड, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
171.	धमेन्द्र आर्य, कठमालिया थोक, छाता, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
172.	वेदप्रकाश आर्य, तालफरा, जिला-भरतपुर (राज.)	200/-
173.	कपिल प्रतापसिंह, ताराधाम कालोनी, टाउनशिप-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
174.	योगेशचन्द्र, स्वामीपाड़ा, नवीन बाजार, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
175.	रामसिंह आर्य, जागृति बिहार, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
176.	किरनसिंह थामा, गंगानगर, मवाना रोड, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
177.	सुशीलकुमार त्यागी, वैदिक कन्या गुरुकुल, जागृति बिहार, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
178.	मधु गुप्ता, विवेक बिहार कालोनी, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
179.	ऊषा थामा, विवेकनगर, रूड़की रोड, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
180.	अशोक सुधाकर, स्वामीपाड़ा, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
181.	प्रधान/मंत्री, आर्य समाज, बुढ़ाना द्वार, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
182.	दिनेश अग्रवाल शिवपुरी, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
183.	यशपालसिंह आर्य, आदर्श नगर, मेरठ (उ. प्र.)	200/-
184.	प्रभातकुमार, ग्राम- बोहरा, जिला-बिजनौर (उ. प्र.)	200/-
185.	पवनकुमार शर्मा, गाँव- अथाई, जिला- बिजनौर (उ. प्र.)	200/-
186.	नीरज आर्य, ज्ञान बिहार, बिजनौर (उ. प्र.)	200/-
187.	वीरसिंह आर्य, गाँव-अथाई, जिला- बिजनौर (उ. प्र.)	200/-
188.	सहदेवसिंह आर्य, गाँव-अथाई, जिला- बिजनौर (उ. प्र.)	200/-
189.	राजकुमार, गाँव व पोस्ट-मोहदीपुर, जिला-रेवाड़ी (हरि.)	200/-
190.	बालिस्टर, ग्राम-रानूखेड़ा, जिला-फर्रूखाबाद (उ. प्र.)	200/-
191.	हरिसिंह फौजी, ग्राम व पोस्ट-गदनुपुर-देवराजपुर, जिला-फर्रूखाबाद	200/-
192.	कैप्टन खडगसिंह, ग्राम व पोस्ट-अडूकी, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
193.	युधिष्ठिर कुमार (काकाजी), हास्पीटल रोड, आगरा (उ. प्र.)	200/-
194.	माया सिंघल, हाउसिंग बोर्ड कालोनी, धौलपुर (राज.)	200/-
195.	स्वामी आत्मानन्द सरस्वती, कस्बा-पिनाहट, जिला-आगरा (उ. प्र.)	200/-
196.	आर्य सत्यदेव गुप्ता, शमशाबाद, जिला-आगरा (उ. प्र.)	200/-
197.	राम अवतार वर्मा, ग्राम व पोस्ट-बलीदपुर, जिला-मऊ (उ. प्र.)	200/-
198.	धुरेन्द्रपालसिंह, ग्राम-गढ़ी रामबल, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-
199.	हरिशचन्द्र आर्य, ग्राम-लालपुर, जिला-मथुरा (उ. प्र.)	200/-

प्रथम वह पण्डित की परिभाषा करके समझाता था कि पण्डित कैसे बनते हैं या पण्डित कहते किसे हैं? उस समय के आचार्य आज के अध्यापकों की तरह नहीं समझाते थे कि अंग्रेजी, गणित, विज्ञान, भूगोल आदि विषयों में अत्यधिक योग्यता होने पर या 100 प्रतिशत अंक आने पर विद्वान् बनोगे या पी. एच. डी. या डी. लिट करने पर विद्वान् (पण्डित) बनोगे। इन बातों को गुरुकुलीय आचार्य नहीं कहते थे वे कहते थे कि पुत्र यदि पण्डित बनना है तो पहले पण्डित बनने की परिभाषा सुनो।

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पण्डितः।।

अर्थात् संसार की प्रत्येक स्त्री को माता के समान मानो यह पण्डित बनने की पहली शर्त है। विद्यार्थी जब इस बात को हृदय में धारण कर लेगा तो फिर कभी भी व्यभिचार की भावना भी मन में नहीं लायेगा। अर्थात् बलात्कार करने की मन में उठने वाली वासना अपने आप इस भावना से समाप्त हो जायेगी। अर्थात् इस भावना से विद्यालय से निकलने वाला छात्र इस निष्कृष्ट कार्य को करना तो दूर मन में सोचना भी घृणित मानेगा। इस शिक्षा से समाज में फैले व्यभिचार पर निश्चित विराम लगेगा और हमारी बहिन स्वतः सुरक्षित हो जायेंगी। ऐसा छात्र दुष्टों से उनकी रक्षा करने में सदैव तत्पर रहेगा।

दूसरी शिक्षा पण्डित बनने के लिए है वह है **परद्रव्येषु लोष्ठवत्** अर्थात् दूसरे के धन को मिट्टी के समान मानो। जब छात्र के संस्कारों में यह बात स्थान पायेगी तो वह कभी रिश्वत आदि लेने के कुकृत्य को नहीं करेगा और राष्ट्र के प्रत्येक कार्य को निष्ठा से समपन्न करेगा। फिर न तो पुल असमय में टूटेंगे और न चार दिन में सड़कें उखड़ेगी, न दीन हीनों का शोषण होगा, न अन्यायी रिश्वत देकर अपराध से छूटेंगे, न कोई किसी के घर पर कब्जा करेगा, न कोई छल से किसी के धन का हरण करेगा, न दूसरे के धन के लोभ के कारण किसी की हत्या करेगा सर्वत्र सुख शान्ति का साम्राज्य स्वतः स्थापित हो जायेगा। ऐसे संस्कारोंवाला छात्र आत्म संयम का संवाहक होकर राष्ट्रिय जीवन से शुचिता भरकर राष्ट्रोन्नति का श्रेष्ठ सोपान बनेगा।

पण्डित बनने की तीसरी योग्यता **आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति सः पण्डिताः** अर्थात् अपने हानि लाभ के समान सब प्राणिमात्र के हानि लाभ को समझेगा। फिर वह कभी भी दूध, घी, मसाले, खोवा आदि खाद्य पदार्थों की मिलावट कर किसी के स्वास्थ्य से खिलवाड़ नहीं करेगा, न किडनी आदि बेचकर लाभ कमायेगा। न चिकित्सालयों में कार्यालयों में भोले लोगों की जेब से डाका डालेगा। कहने का तात्पर्य है कि इस श्लोक में सब प्रकार की समस्याओं का समाधान दे दिया। ऐसी शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी सचमुच पण्डित बनकर निकलेगा जो प्राणिमात्र के सुख का आधार होगा। हम लोग भी अपने घरों में बच्चों को ऐसे ही संस्कारों से ओत-प्रोत करने के पवित्र कार्य में लग जायें इससे बढ़कर कोई ईश्वरभक्ति व देशभक्ति नहीं है। जब तक हम ऋषियों के बताये इस संस्कार प्रधान वातावरण का सृजन नहीं करते हैं तब तक सर्वनाश को लाने वाली समस्याओं का निराकरण होना सम्भव ही नहीं है। हम स्वयं अपने जीवन को इसी सांचे में ढालें और जीवन को धन्य करें। ध्यान रहे सांसारिक चकाचौंध में यदि हमने इस सच्चाई से मुँह मोड़ा तो सर्वनाश को निमन्त्रण देना है।

आयें मिलकर वैदिक शिक्षा का उद्धार करें अपना तन, मन, धन वैदिक शिक्षा के उद्धार में लगाकर प्रभु आदेश का पालन करें। अपने जीवन में सुख शान्ति आनन्द की त्रिवेणी नहाकर निर्मल मन हो राष्ट्र को बचायें।

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण (सजिल्द)	220.00	आर्यों की दिनचर्या	30.00	नमस्ते ही क्यों	10.00
शुद्ध रामायण (अजिल्द)	170.00	चार मित्रों की बातें	20.00	आदर्श पत्नी	10.00
योग दर्शन	150.00	भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00	ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
शंकर सर्वस्व	120.00	मील का पत्थर	20.00	सच्चे गुच्छे	8.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00	भ्रांति दर्शन	20.00	मृतक भोज और श्राद्ध तर्पण	8.00
शुद्ध कृष्णायण	80.00	शान्ता	20.00	भागवत के नमकीन चुटकुले	8.00
नित्य कर्म विधि	70.00	संध्या रहस्य	20.00	मानव तू मानव बन	8.00
शुद्ध हनुमच्चरित (प्रेस में)		गीता तत्व दर्शन	20.00	गायत्री गौरव	5.00
वैराग्य दिवाकर	50.00	गृहस्थ जीवन रहस्य	20.00	सफल व्यक्तित्व	5.00
वैदिक संध्या विधि	50.00	श्रीमद् भगवत गीता	20.00	जीजा साले की बातें	5.00
दो मित्रों की बातें	50.00	दयानन्द और विवेकानन्द	15.00	पंचाग के गुलाम	5.00
दो बहिनों की बातें	50.00	शुद्ध सत्यनारायण कथा	15.00	सर्प विष उपचार	4.00
विदुर नीति	40.00	महाभारत के कृष्ण	15.00	चूहे की कहानी	4.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	40.00	महिला गीतांजलि	15.00	सत्यार्थ प्रकाश मेरी दृष्टि में	4.00
चाणक्य नीति	40.00	इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00	दयानन्द की दया	3.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	40.00	बाल मनुस्मृति	12.00	शंकराचार्य और मूर्ति पूजा	3.00
वेद प्रभा	30.00	ओंकार उपासना	12.00	शांति पथ	2.00
शान्ति कथा (प्रेस में)		पुराणों के कृष्ण	12.00	सुमंगली (प्रेस में)	
भारत और मूर्ति पूजा	30.00	दादी पोती की बातें	10.00	बाल सत्यार्थ प्रकाश (प्रेस में)	
यज्ञमय जीवन	30.00	दण्डी जी का जीवन पथ	10.00		

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2022 के लिये वार्षिक शुल्क 200/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 2100/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में,

....
....
....
....
.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
मोबा. 9759804182

Yogendra # 9927136600

मुद्रक : स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित